आपकी आशाओं का सुन्दर प्रतिबिम्ब

फ़रवरी 2026

क्रान्ति

मासिक

सहयोग राशि
30/-₹

आर्थिक ख़ुशहाली सबकी ज़रूरत

- नए बजट में क्या हो ?
- आर्थिक असमानता और क्रोनी पूंजीवाद
- बजट और सामाजिक न्याय



مستشفیٰ الشفاء

alshifa®

MULTI SPECIALITY HOSPITAL



human welfare trust | VISION 2026®

Creating Partnership with the needy

SCOPE OF SERVICES

- GENERAL MEDICINE
- CARDIOLOGY
- OBSTETRICS & GYNAECOLOGY
- PAEDIATRICS & NEONATOLOGY
- PULMONOLOGY (CHEST & T.B.)
- NEPHROLOGY & DIALYSIS
- GENERAL & LAPAROSCOPIC SURGERY
- NEUROLOGY & NEUROSURGERY
- GASTROENTEROLOGY
- GASTRO SURGERY
- PLASTIC SURGERY & BURNS
- VASCULAR SURGERY
- ORTHOPEDICS
- DERMATOLOGY (SKIN & VD)
- DIABETIC & THYROID CARE
- ENT (EAR, NOSE & THROAT)
- UROLOGY
- PSYCHIATRY
- CLINICAL PSYCHOLOGY
- OPHTHALMOLOGY (EYE)
- DENTISTRY
- ANESTHESIA & PAIN MANAGEMENT
- ONCOLOGY
- DIETETICS & NUTRITION
- PHYSIOTHERAPY
- RADIOLOGY
- BLOOD STORAGE CENTER

24/7 EMERGENCY SERVICES

ALSHIFA

MULTI-SPECIALITY HOSPITAL

D-305, Abul Fazal Enclave, Jamia Nagar, Okhla, New Delhi

011 41513520, 41513530, 42175350, 98188 44498

- EMERGENCY & TRAUMA CARE
- ICU & NICU
- PHARMACY
- DIGITAL X-RAY
- CT SCAN (32 SLICE)
- FULLY AUTOMATED COMPUT. LABORATORY
- ACLS/BLS AMBULANCE

प्रधान संपादक
डॉ. फ़रहत हुसैन
kantieditorial@gmail.com

प्रबंधक
नईम ख़ान
+91 9891160829

सहयोग राशि
एक प्रति 30/- रु॰ एक वर्ष 350/- रु॰
पांच वर्ष 1500/- रु॰ आजीवन रु॰ 5000/
सऊदी अरब और खाड़ी के देशों के लिए 110/- रियाल
यूरोप व अमेरिका के लिए 40/- US डॉलर

ख़रीदार बनने, एजेंसी लेने, प्रचार-प्रसार एवं प्रबंधकीय मामलों के लिए सम्पर्क करें :

कार्यालय :
कान्ति मासिक, डी-314, दावत नगर,
अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव, जामिया नगर,
ओखला, नई दिल्ली-110025

हेल्पलाइन न॰
9818799223

Account Detail
NAME : KANTI
A/C NO : 0990839195
IFS CODE : IDIB000J029
TYPE : CURRENT
BANK : INDIAN BANK
BRANCH : JAMIA MILLIA ISLAMIA
NEW DELHI - 110025
चेक / ड्राफ़्ट 'कान्ति' के नाम से बनवाएं

प्रकाशक मुहम्मद अहमद द्वारा दावत
ट्रस्ट (रजि॰), डी-314 दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव,
जामिया नगर, नई दिल्ली-110025 से प्रकाशित एवं
Printer : Akhilesh Singh
Press : AARYA PRINTERS
201, Ground Floor, DSIDC Complex
Okhla Industrial Area phase-1,
New Delhi-110020
Editor : Shibli Arsalan

संस्था की लिखित अनुमति के बिना सम्पूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित है।

विचार सौरभ **डॉ. कौसर यज़दानी नदवी**

अध्ययन करने की सीख

विज्ञान की दुनिया में
कहां क्या हो रहा है ?
इसकी बराबर ख़बर रखते थे
विख्यात भारतीय वैज्ञानिक चन्द्रशेखर वेंकटरामन,
अध्ययन उनके दैनिक कार्यक्रमों का अंग बन गया था।
वह कहा करते थे,
व्यक्तित्व को संवारना-निखारना है, तो अध्ययन करो,
दुनिया में कुछ कर गुज़रने के लिए भी ज़रूरी है अध्ययन
यह शिक्षा वह अपने शिष्यों को भी देते,
उन्हें उत्साहित करते, कभी डांट-डपट भी करते,
स्वयं भी उस पर अमल करते।
रात को सोने से पहले
भौतिकी की कोई नई पुस्तक पढ़ने का उनका नियम कभी नहीं टूटा
एक बार जब वह बेलगांव पधारे,
रोटरी क्लब में अपना भाषण देने के लिए,
तो घर लौटने में रात का एक बज गया।
इस अवसर पर
रमन के युवा शिष्य प्रो॰ परम शिवय्या भी
निमंत्रित किए गए थे।
वह भी साथ थे।
शिवय्या जी अपने एक लेख में लिखते हैं–
एक बज चुका था, इसलिए मैं सीधा सोने चल दिया,
तुरन्त गुरुजी का प्रहार हुआ,
क्या बहुत बड़े आदमी हो गए हो ?
रोज़ रात को कोई नई पुस्तक पढ़नी चाहिए,
यह मेरा कहना भूल गए क्या ?
यह कहा और
स्टेलर और फ्रांक रचित हाल ही में प्रकाशित
'सैद्धांतिक भौतिकी का परिचय' नामक पुस्तक
अपने संदूक़ से निकाल कर
मेरे हाथ में थमा दी।
स्वयं भी एक किताब लेकर अध्ययन करने बैठ गए
जब हमारी पढ़ाई ख़त्म हुई,
पौ फट रही थी।
यह था वह अध्ययन,
जिसने चन्द्रशेखर वेंकट रामन को महान वैज्ञानिक बना दिया था,
क्या अच्छा हो, इस सीख को हम सब अपने जीवन में उतार लें !

(प्रथम प्रकाशन : मई 1997)

वर्ष 35 अंक 08 फ़रवरी 2026





आपकी आशाओं का सुन्दर प्रतिबिम्ब

कान्ति
मासिक

इस अंक में

➢ अध्ययन करने की सीख (विचार सौरभ)	– डॉ. कौसर यज़दानी नदवी	3
➢ आर्थिक ख़ुशहाली सबकी ज़रूरत (संपादकीय)	–डॉ. फ़रहत हुसैन	5
➢ मार्गदर्शन	–संपादन प्रभाग	6
➢ सम्पूर्ण समर्पण का प्रशिक्षण शिविर	–संपादन प्रभाग	7
➢ अंतिम पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) किशोरावस्था और जवानी	–मुशर्रफ़ अली	11
➢ स्वयं से विश्वासघात	–इनायतुल्लाह सुब्हानी	15
➢ इक्कीसवीं सदी में धर्म और उसकी प्रासंगिकता	–एफ. ए. मुजीब	17
➢ संवाद की सार्थकता	–सुफ़ियान अहमद	19
➢ केंद्रीय बजट 2026-27 : नए बजट में क्या हो?	–डॉ. फ़रहत हुसैन	21
➢ बजट क्या है ?	–मुहम्मद शकील शम्सी	25
➢ उपभोक्तावाद बनाम संतुलित जीवन	–मुहम्मद सिकन्दर	27
➢ बढ़ती जीडीपी, गिरता रुपया	–डॉ. प्रदीप कुमार	29
➢ भारत में सामूहिक ज़कात की रूप-रेखा	–एच. अब्दुर्रक़ीब	31
➢ आर्थिक असमानता और क्रोनी पूंजीवाद	–सुफ़ियान अहमद	33
➢ बजट और सामाजिक न्याय	–डॉ. मुहम्मद इक़बाल सिद्दीक़ी	35
➢ “विश्वास, आस्था, नैतिकता और नागरिक दायित्व”	–जुनैद अली	39
➢ हिजाब ने इस्लाम तक पहुंचाया	–वारिस हुसैन	43
➢ नया हस्तिनापुर (लघुकथा)	–सुफ़ियान अहमद	44
➢ नैतिक मूल्य और मानवीय स्वतंत्रता	–लुबना सबूब	45
➢ महिलाओं की गरिमा और वास्तविक सशक्तीकरण	–नुज़हत यासमीन	47
➢ विश्व घटनाचक्र	–संपादन प्रभाग	49

संपादकीय



डॉ. फ़रहत हुसैन

आर्थिक ख़ुशहाली सबकी ज़रूरत

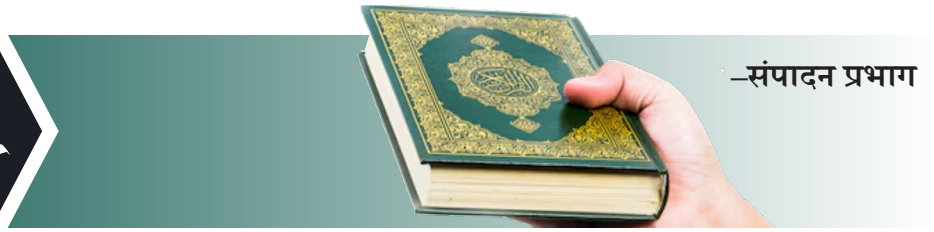
भारतीय अर्थव्यवस्था दुनिया की तेज़ गति से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्थाओं में से एक मानी जाती है। पिछले दशक में देश में धन के सृजन में बढ़ोत्तरी हुई है। भारत में बड़ी मात्रा में आर्थिक संसाधन उपलब्ध हैं, विशेष रूप से मानव संसाधन। Harvard Business Review के अनुसार भारत में 2030 तक कार्यशील जनसंख्या (Working Population) 104 करोड़ हो जाएगी। इसे डेमोग्राफ़िक डिविडेंड (Demographic Dividend) कहा जाता है, जो दूसरी ओर उपभोक्ता बढ़ोत्तरी (Consumer Boom) का आधार भी बनती है। अर्थात् यह आबादी एक ओर तो उत्पादन के साधन के रूप में वस्तुओं तथा सेवाओं की उत्पादन प्रक्रिया में सहयोग प्रदान करती है, वहीं दूसरी ओर उपभोक्ता के रूप में उत्पादित वस्तुओं की मांग पैदा करने वाला पक्ष होता है। इसके अतिरिक्त भारतीय अर्थव्यवस्था में कई अन्य सकारात्मक पहलू पाए जाते हैं जैसे डिजिटल इकोनोमी का विस्तार, आर्थिक ढांचे के क्षेत्र में विकास आदि। यही कारण है कि विदेशी निवेशक भारत में निवेश करने में रुचि रखते हैं।

परंतु दूसरी ओर देश को आर्थिक चुनौतियों का भी सामना है, जिनमें प्रमुख हैं—ग़रीबी, बेरोज़गारी, आय की असमानता, मुद्रास्फीति के कारण महंगाई, भ्रष्टाचार आदि। लगभग एक चौथाई आबादी ग़रीबी की रेखा के नीचे जीवन-यापन कर रही है। यही कारण है कि सरकार को बड़ी मात्रा में खाद्यान्न वितरण तथा अन्य राहत योजनाएं चलानी पड़ रही हैं। शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोज़गारी एक समस्या है। इसी प्रकार अमीर-ग़रीब के बीच का अंतर, जिसे 'आर्थिक असमानता' कहते हैं, व्याप्त है। विश्व असमानता रिपोर्ट (World Inequality Report 2026) के अनुसार देश के 10% बड़े अमीरों के पास राष्ट्रीय आय का 58% है, जबकि नीचे के 50% के पास आय का केवल 15% है। अमेरिका की टैरिफ़ नीतियों तथा रूस यूक्रेन युद्ध जैसे बाह्य कारणों से भी भारत की अर्थव्यवस्था प्रभावित हो रही है।

ग़रीबी तथा बेरोज़गारी की समस्या के समाधान के लिए संगठित क्षेत्र के साथ ही असंगठित क्षेत्र (Unorganised Sector) अर्थात् छोटे उद्योगों (MSMEs) को बढ़ावा देना होगा, क्योंकि एक अनुमान के अनुसार यह क्षेत्र 90% से अधिक रोज़गार का स्रोत है। ऐसी आर्थिक नीतियों का निर्माण होना चाहिए जिससे पूंजी का निवेश उत्पादन की गतिविधियों को मज़बूत करे, इससे आर्थिक क्रियाओं में बढ़ोत्तरी होगी और वास्तविक आय (Real Income) सृजित होगी। भारत कृषि प्रधान देश है इसलिए इस क्षेत्र की ओर विशेष ध्यान देना होगा। ग़रीब तबक़े को राहत योजनाओं का लाभ देने के साथ ही उनके सशक्तीकरण के लिए स्थाई समाधान खोजने होंगे। सबसे ज़रूरी चीज़ यह है कि हाशिए पर जीवन-यापन करने वाले नागरिकों (Marginal Citizens) का ध्यान रखा जाए, उनकी बुनियादी आवश्यकताओं को पूर्ण करने को प्राथमिकता दी जाए।

आर्थिक विकास के लिए एक महत्वपूर्ण घटक है 'अनुकूल वातावरण'। सामाजिक एवं राजनीतिक परिस्थितियां यदि सौहार्दपूर्ण होंगी, तो आर्थिक क्षेत्र गतिमान होगा, विदेशी निवेशक भी आकर्षित होंगे और देश के पूंजीपति देश छोड़कर विदेश नहीं जाएंगे। समाज के विभिन्न वर्गों के बीच माहौल को बिगाड़ने के कृत्य आर्थिक ख़ुशहाली पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं, आर्थिक प्रगति के लिए इनसे बचना नितांत आवश्यक है। कुल मिलाकर, आम जनता नीति निर्माताओं से यही आशा करती है कि वे ऐसी आर्थिक नीतियां बनाएंगे जो देश को आर्थिक मज़बूती प्रदान करने के साथ ही रोज़गार के अवसर बढ़ाए, जिससे लोगों के जीवन स्तर में सुधार हो तथा आर्थिक ख़ुशहाली आए। ■■

क़ुरआन



–संपादन प्रभाग

धनोपार्जन का निर्देश

“फिर जब नमाज़ पूरी हो जाए तो धरती में फैल जाओ और अल्लाह का फ़ज़्ल (रोज़ी) तलाश करो।” (क़ुरआन, 62:10)

क़ुरआन की इस आयत में इन्सान की सांसारिक ज़रूरतों को पूरा करने के लिए धन कमाने की शिक्षा दी गई है। यहां कहा गया है कि अपनी रूहानी तरक़्क़ी (आध्यात्मिक उन्नति) के लिए निर्धारित समय में नमाज़ अदा करो अर्थात् ईश-वंदना करो उसके बाद ज़मीन में फैल जाओ और हलाल कमाई के लिए दौड़-धूप करो। इस आयत के द्वारा इस्लामी सभ्यता की एक बड़ी विशेषता को उजागर किया गया है जिसमें इंसानी ज़िन्दगी के आध्यात्मिक पक्ष (रूहानी पहलू) और सांसारिक या भौतिक पक्ष दोनों की पूर्ति का सुंदर एवं अद्भुत संगम और सामंजस्य प्रस्तुत किया गया है। एक दूसरे स्थान पर धन के महत्व को इस प्रकार व्यक्त किया गया :

“अपने वे माल जिन्हें अल्लाह ने तुम्हारी स्थिरता का साधन बनाया है नासमझ लोगों के हवाले न करो।” (क़ुरआन, 4:5)

इस आयत से ज्ञात होता है कि धन-संपत्ति तथा साधन इन्सान के लिए बहुत उपयोगी हैं, इस तथ्य को स्वीकार करना चाहिए, परंतु यह भी याद रखना चाहिए की धन को अत्यधिक महत्व देने, धन कमाने में उचित-अनुचित का ध्यान न रखने तथा धन इकट्ठा करने को अपने जीवन का मूल उद्देश्य बनाने की अनुमति नहीं है।

हदीस

धन सम्पत्ति अल्लाह की नेमत

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) का कथन है : "यह माल हरा-भरा और मन-भावन अवश्य है और मुसलमान का माल तो क्या ही अच्छा है, जो उसे सत्य के साथ हासिल करे फिर उसे ईश्वरीय मार्ग में, अनाथों, दीन-दुखियों और मुसाफ़िरों पर ख़र्च करता रहे। इसके विपरीत जो व्यक्ति उसे हक़ के साथ हासिल नहीं करता (अवैध रूप से प्राप्त करता है) वह उस खाने वाले व्यक्ति की तरह है जिसकी भूख कभी नहीं मिटती और वह माल उसके विरुद्ध क़ियामत (प्रलय) के दिन गवाही देगा।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस कथन से भली-भांति यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इस्लामी अर्थव्यवस्था का विशिष्ट गुण क्या है। इसमें सन्देह नहीं कि माल और धन का मिलना ईश्वर की एक बड़ी कृपा है। यह मधुर भी है और आनन्दप्रद भी, लेकिन फिर भी मानव-जीवन में माल अपने-आप में लक्ष्य नहीं है। वास्तव में माल उस व्यक्ति के लिए एक सुखद पदार्थ है जो धन प्राप्त करने में वैध और उचित तरीक़े अपनाता है और उसके ख़र्च करने में भी इसका ध्यान रखता है कि वह ग़लत कामों में ख़र्च न हो। माल कहां ख़र्च करना चाहिए और कहां नहीं, इसे न केवल यह कि वह जानता है, बल्कि उसे व्यवहार में भी लाता है। फिर एक आस्थावान व्यक्ति से ही यह आशा की जा सकती है कि वह धनोपार्जन में वैध और अवैध तरीक़ों के बीच अन्तर करेगा। वह माल प्राप्त करने के लिए ऐसे तरीक़े कदापि नहीं अपनाएगा जो ज़ुल्म और अन्याय पर आधारित होंगे। इसी प्रकार माल के ख़र्च करने में भी वह स्वार्थपरता से काम नहीं लेगा।

विशेष

रोज़ों का आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक महत्व

सम्पूर्ण समर्पण का प्रशिक्षण शिविर



❖संपादन प्रभाग

रोज़ा इस्लाम के पाँच मूल स्तंभों में से एक है। इसका पालन न करना इस्लाम के आधार को नकारने के समान है। अक्सर लोग पूछते हैं कि भोर से संध्या तक केवल खाना-पीना और यौन संबंध न बनाना इतना क्यों महत्वपूर्ण हो गया कि इसी पर धर्म की स्थिरता निर्भर है।

असल में इसका जवाब सरल है, लेकिन इसका प्रभाव बहुत गहरा और व्यापक है। रोज़ा केवल भूख-प्यास सहने की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह इंसान और समाज दोनों को सुधारने और उन्हें मज़बूत बनाने का ईश्वरीय तरीक़ा है। यह हर ग्यारह महीने बाद आता है और एक महीने की परहेज़गारी के ज़रिए व्यक्ति को इतना प्रशिक्षित करता है कि वह अगले ग्यारह महीनों तक नैतिक, आध्यात्मिक और सामाजिक रूप से सुदृढ़ बना रहे।

रोज़ा इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह व्यक्ति और समाज को एक ही समय में ईश्वर की आज्ञा के प्रति समर्पित करता है। इसके माध्यम से इंसान और समाज के बीच घनिष्ठ, लाभकारी और हितकारी संबंध स्थापित होते हैं।

रोज़ा इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह व्यक्ति और समाज को एक ही समय में ईश्वर की आज्ञा के प्रति समर्पित करता है। इसके माध्यम से इंसान और समाज के बीच घनिष्ठ, लाभकारी और हितकारी संबंध स्थापित होते हैं। यह एक अद्भुत प्रशिक्षण शिविर है, जिसमें व्यक्ति अपने व्यवहार, इच्छाओं और भावनाओं पर नियंत्रण सीखता है।

रोज़े की वास्तविकता

क़ुरआन में इसके लिए 'सौम' शब्द प्रयोग हुआ है, जिसका शाब्दिक अर्थ है—रुक जाना। इसका असली मतलब यह है कि इंसान उन आदतों और बुराइयों से ख़ुद को रोक ले जो उसकी आत्मा, चरित्र और नैतिक आधार को कमज़ोर करती हैं। इनमें झूठ, धोखा, निंदा, अपशब्द, अत्याचार, चोरी, व्यभिचार और अन्य ग़लत कार्य शामिल हैं।

क़ुरआन (2:183) में रोज़े का मुख्य उद्देश्य 'तक़वा'

बताया गया है। तक़वा का अर्थ है—संयम, बचाव और आत्म-नियंत्रण। यही कारण है कि रोज़े का महीना व्यक्ति और समाज दोनों के लिए प्रशिक्षण का समय है, ताकि वे दोषपूर्ण कार्यों और बुराइयों से ख़ुद को रोकना सीख सकें।

रोज़ा यह भी सिखाता है कि इंसान केवल खाने-पीने की इच्छाओं पर ही नहीं, बल्कि हर बुरी आदत और ग़लत काम पर भी नियंत्रण रख सकता है। यही रोज़े का वास्तविक आध्यात्मिक और नैतिक महत्व है।

इस प्रशिक्षण में केवल शरीर शामिल नहीं होता, बल्कि मन, मस्तिष्क और भावनाएँ भी इसमें सक्रिय रूप से शामिल होते हैं। इंसान हर रोज़ अपने भीतर यह निरीक्षण करता है कि कौन-सी इच्छाएँ और कार्य ईश्वरीय आदेशों के अनुकूल हैं और कौन-सी नहीं। इस आत्म-निरीक्षण और आत्म-नियंत्रण से व्यक्ति का व्यक्तित्व और चरित्र मज़बूत होता है।

रोज़े का आध्यात्मिक महत्व

सारे जीवधारियों में शरीर और प्राण होता है, लेकिन इंसान में एक तीसरा तत्व—आत्मा—भी होती है, जो उसे बाक़ी जीवों से अलग और श्रेष्ठ बनाती है। इंसान तभी वास्तविक अर्थ में प्रभावशाली बन सकता है जब उसका आध्यात्मिक विकास उसकी शारीरिक आवश्यकताओं से अधिक महत्व पाए।



आध्यात्मिकता का केंद्र और स्रोत ईश्वर है। इंसान जितना संवेदनशील होगा, उसका चरित्र उतना ही उत्कृष्ट और मज़बूत होगा। ऐसे व्यक्तियों से बना समाज न्यायपूर्ण, शांतिपूर्ण और परोपकारी बनता है। रोज़ा इसी प्रकार के व्यक्ति और समाज बनाने में सहायक है।

रोज़ेदार हर क्षण यह याद रखता है कि ईश्वर उसे देख रहा है। प्यास और भूख की स्थिति में भी वह पानी की एक बूंद तक गले से नीचे नहीं जाने देता। अकेले में खाना-पीना या यौन संबंध संभव होते हुए भी, वह केवल ईश्वर के आदेश के कारण ख़ुद को रोकता है।

भोजन, पानी और यौन संबंध जीवन की स्वाभाविक और वैध आवश्यकताएँ हैं। रोज़े के दौरान इन्हें अस्थायी रूप से रोकना इंसान में यह चेतना उत्पन्न करता है कि अगर हम हलाल चीज़ों और कार्यों को छोड़ सकते हैं, तो बुरे और हराम कार्यों से दूर रहना और भी आसान है।

रमज़ान के महीने में अधिक से अधिक इबादत, क़ुरआन पाठ, इच्छाओं पर नियंत्रण और ईश्वर की प्रसन्नता प्राप्त करने की कोशिश व्यक्ति और समाज दोनों के आध्यात्मिक स्तर को लगातार ऊँचा करती है। इसका लाभ अगले ग्यारह महीनों तक उठाया जाता है।

रोज़े का नैतिक महत्व

नैतिकता इंसान की सबसे मूल्यवान संपत्ति है। ईश्वर ने इंसान की फ़ितरत में नैतिक गुण इस तरह रखे हैं कि वह सच बोलने, न्याय करने, ईमानदार रहने, परोपकार और करुणा दिखाने की ओर स्वाभाविक रूप से झुके। इसी तरह झूठ, धोखा, अन्याय और अत्याचार से घृणा भी उसकी फ़ितरत में है।

लेकिन कभी-कभी आंतरिक कमज़ोरियाँ और बाहरी परिस्थितियां इन गुणों को कमज़ोर कर देती हैं। इच्छाशक्ति बुराई के सामने टिक नहीं पाती। ऐसे समय में रोज़ा नैतिक और आध्यात्मिक सुधार का एक अति प्रभावी साधन बन जाता है।

रोज़ा एक महीने का प्रशिक्षण है जिसमें ग़लत कार्यों से दूर रहना और अच्छे कार्य करना लगातार सिखाया जाता है। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) ने कहा है कि अगर कोई रोज़ा रखकर भी बुरी बातें या आदतें नहीं छोड़ता, तो उसके भूखे-प्यासे रहने से कोई लाभ नहीं।

इसका मतलब है कि रोज़ा केवल पेट का संयम नहीं, बल्कि चरित्र और व्यवहार का संयम भी है। ईश्वर अपने बंदों

को कठिनाइयों में डालकर उन्हें सुधारने और ऊँचा उठाने का प्रयास करता है।

रोज़ा मनुष्य को यह भी सिखाता है कि नैतिकता केवल सामाजिक दबाव या दिखावे से नहीं आती, बल्कि आत्म-जागरूकता और ईश्वर के प्रति ज़िम्मेदारी से आती है। यही नैतिक प्रशिक्षण व्यक्ति के चरित्र की नींव मज़बूत करता है।

रोज़े का सामाजिक महत्व

रोज़ा केवल व्यक्तिगत साधना नहीं है, बल्कि सामाजिक सुधार और उत्थान का भी माध्यम है। इस्लाम की अन्य इबादतें—नमाज़, ज़कात और हज की तरह रोज़ा भी समाज के नैतिक ढांचे को मज़बूत करता है।

यह एक अद्भुत प्रशिक्षण शिविर है, जिसमें व्यक्ति अपने व्यवहार, इच्छाओं और भावनाओं पर नियंत्रण सीखता है। रोज़ा यह भी सिखाता है कि इंसान केवल खाने-पीने की इच्छाओं पर ही नहीं, बल्कि हर बुरी आदत और ग़लत काम पर भी नियंत्रण रख सकता है। यही रोज़े का वास्तविक आध्यात्मिक और नैतिक महत्व है।

रोज़े के दौरान इंसान ग़रीबों की तकलीफ़ महसूस करता है। भूख-प्यास का अनुभव उसे दूसरों के प्रति करुणाशील और सहानुभूतिपूर्ण बनाता है। जो लोग रोज़ा नहीं रख सकते, उनके लिए निर्धनों को भोजन कराना अनिवार्य है। रोज़े में हुई त्रुटियों का प्रायश्चित भी दान और अन्य सामाजिक ज़िम्मेदारियों से किया जाता है।

रोज़ा समाज में संयम, नैतिक शुद्धता, करुणा और आर्थिक संतुलन को धार्मिक कर्तव्य के रूप में स्थापित करता है। यह केवल उपवास नहीं, बल्कि व्यक्ति और समाज—दोनों को सुधारने, सशक्त बनाने और नैतिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से ऊँचा उठाने का एक संपूर्ण प्रशिक्षण है।

इस प्रक्रिया से समाज में समानता और सहयोग की भावना बढ़ती है। लोग अपने सुख-दुख में दूसरों का ध्यान रखते हैं, और निर्धनों और असहायों के प्रति ज़िम्मेदारी महसूस करते हैं। इस तरह रोज़ा सामाजिक न्याय, करुणा और सामूहिक ज़िम्मेदारी को भी मज़बूत करता है।

रोज़ा यह सिखाता है कि केवल भौतिक साधन और धन ही समाज को नहीं बदलते, बल्कि नैतिकता, संयम और ईश्वर-संबंधी चेतना भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। यही कारण है कि रोज़ा केवल एक धार्मिक नियम नहीं, बल्कि समाज सुधार का अभ्यास है।

रोज़ा केवल उपवास नहीं है। यह व्यक्ति और समाज दोनों को सुधारने, सशक्त बनाने और नैतिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से ऊँचा उठाने वाला एक मासिक प्रशिक्षण कार्यक्रम है। यह आत्म-नियंत्रण, संयम, नैतिकता और आध्यात्मिक चेतना का अभ्यास कराता है।

इस महीने में इंसान अपने भीतर जागरूक रहता है कि कौन-सी इच्छाएं और कार्य ईश्वर के आदेशों के अनुकूल हैं और कौन-सी नहीं। यह अनुभव उसे पूरे वर्ष नैतिक, आध्यात्मिक और सामाजिक रूप से सशक्त बनाता है।

रोज़ा समाज में करुणा, सहयोग, नैतिकता और आर्थिक संतुलन की भावना पैदा करता है। यह धार्मिक कर्तव्य के रूप में व्यक्तिगत और सामाजिक सुधार का माध्यम है। इसलिए रोज़ा इस्लाम में केवल एक इबादत नहीं, बल्कि व्यक्ति और समाज दोनों को मज़बूत करने और सुधारने वाला अभ्यास है।■■

कान्ति मासिक के सभी पाठक

कृपया ध्यान दें!

अपना पूरा नाम : .....

पता : .....

पोस्ट ऑफिस : .....

डिस्ट्रिक्ट : .....स्टेट : .....पिन : .....

कांटेक्ट नंबर : .....

नीचे दिए गए व्हाट्सऐप नम्बर पर भेजने की मेहरबानी करें।

धन्यवाद!

व्हाट्सऐप नंबर : 98187 99223

नोट : अपना कांटेक्ट नंबर लिखना न भूलें।

इस्लामी अर्थशास्त्र

इस्लाम की जीवन–व्यवस्था	मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी	35.00
इंसान की आर्थिक समस्या और उसका इस्लामी हल	मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी	16.00
इस्लामी अर्थशास्त्र	मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी	140.00
इस्लामी अर्थशास्त्र एक परिचय	डॉ० फ़ज़्लुर्रहमान फ़रीदी	30.00
इस्लामी अर्थव्यवस्था के सिद्धान्त और उद्देश्य	मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी	16.00
इस्लामी अर्यशास्त्र की रूप रेखा	डॉ० वक़ार अनवर	100.00
क़ुरआन की आर्थिक शिक्षाएँ	डॉ० फरहत हुसैन	20.00
दौलत में ख़ुदा और बन्दों का हक़	मौलाना सय्यद जलालुद्दीन उमरी	16.00
रोज़ी कमाने का इस्लामी तसव्वुर	मुहम्मद अनस फलाही मदनी	150.00
पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) की आर्थिक शिक्षाएँ	मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ां	80.00
ब्याज	मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी	90.00
ब्याज का हराम होना	डॉ० मुहम्मद उमर छापरा	34.00
हलाल कमाई (अहमियत, आदाब और तक़ाज़े)	मौलाना वलीउल्लाह सईदी फ़लाही	80.00
पूंजीवादी साम्राज्य और आर्थिक शोषण	सय्यद सआ़दतुल्लाह हुसैनी	20.00
पूंजीवादी साम्राज्य और पर्यावरण संकट	डॉ० नाज़नीन सआ़दत	24.00
पूंजीवादी साम्राज्य और महिलाएं	सय्यद सआ़दतुल्लाह हुसैनी	16.00
पूंजीवादी साम्राज्य और सामाजिक भेदभाव	सय्यद शुजाअत हुसैनी	22.00

MMI PUBLISHERS مرکزی مکتبہ اسلامی پبلشرز

D-307, Dawat Nagar, Abul Fazl Enclave, Jamia Nagar, New Delhi-110025

✉ mmipublishers@gmail.com 🔗 www.mmipublishers.net 📞 **7290092403**

Sub Depot: **Hyderabad** : 9491874087 | **Mumbai** : 9699167700 | **Goa** : 9987196549 | **Bangalore** : 9036996740

जीवन आदर्श

अंतिम पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) किशोरावस्था और जवानी



❖मुशर्रफ़ अली

बकरियां चराना

चचा के यहां रहते हुए हज़रत मुहम्मद मक्का की पहाड़ियों में बकरियां चराने जाया करते थे। यह भी सच है कि अल्लाह ने जितने भी नबी इस दुनिया में बनाये उनमें से अधिकतर ने बकरियां चराने का काम ज़रूर किया है। यहां तक कि अल्लाह के जो नबी अपनी क़ौम के शासक थे, जैसे हज़रत सुलैमान (अलैहि०) और हज़रत दाऊद (अलैहि०) आदि। उन्होंने भी अपने लड़कपन के दिनों में बकरियां चराने का काम किया।

किशोरावस्था में हज़रत मुहम्मद मज़दूरी पर दूसरों की बकरियां चराते थे। बकरियां चराने वाले कई और लोग भी होते, जिनके साथ वे मक्का की पहाड़ियों की दूसरी ओर उतर जाते और तीन-चार दिनों तक उधर ही रहते। सभी चरवाहे अपनी-अपनी बकरियां लेकर किसी सुरक्षित स्थान पर रात बिताते अगले दिन बकरियों को लेकर फिर खुली घाटियों में चरने के लिए छोड़ देते। उन दिनों एक लड़का अक्सर रात में अपनी बकरियां हज़रत मुहम्मद के हवाले करके पहाड़ियां पार कर शहर की ओर चला जाता, जहां नाच-गाने की महफ़िलें सजायी जातीं। लोग सारी रात जागते, नाच गाने होते, कहानियां कही जातीं और शराब का दौर चलता। सुबह तड़के वह लड़का वापस आ जाता। वह लड़का नवयुवा हज़रत मुहम्मद को भी वहां जाने के लिए प्रेरित करता रहता था।

हालांकि हज़रत मुहम्मद को कभी ऐसी जगह जाने की मन से इच्छा नहीं हुई, लेकिन उस लड़के के बार-बार प्रेरित करने पर वे एक बार अपनी बकरियां उसके हवाले करके शहर की ओर गये। चांदनी रात में वे उस ओर क़दम बढ़ा रहे थे, जहां ऐसा आयोजन होता था। दूर से ही उनको गाने की आवाज़ सुनायी पड़ी। आवाज़ सुनते ही उनको नींद आने लगी। फिर उनके लिए चलना संभव नहीं रहा और वे वहीं खुली चट्टान पर सो गये फिर सुबह ही उनकी नींद खुली और वे वापस घाटी में आ गये। पूछने पर उन्होंने उस लड़के को यह घटना बता दी।

उस लड़के ने फिर मुहम्मद पर दबाव डाला, जैसा कि अक्सर साथी लड़के एक-दूसरे पर डालते हैं। अतः कुछ दिनों बाद वे एक बार फिर शहर की ओर जाने को निकले, लेकिन फिर वही हुआ। गाने की आवाज़ कान में पड़ते ही उनको नींद आ गयी और वे आगे नहीं जा सके। इसके बाद कभी उन्होंने ऐसी महफ़िलों में जाने की कोशिश नहीं की।

शांति की संधि

अरब क़बाइली जीवन की कल्पना लड़ाई झगड़ों के

बिना नहीं की जा सकती थी। छोटी-सी बात पर झगड़ा शुरू हो जाता जो पीढ़ियों तक चलता रहता। किसी विवाद को सुलझाने का उनके यहां लड़ाई के सिवा कोई रास्ता नहीं था। क़बीलों के गुट बने हुए थे और गुट के एक क़बीले की लड़ाई दूसरे क़बीलों की भी लड़ाई बन जाती।

पिछले कुछ वर्षों से मक्का में ऐसी कोई लड़ाई नहीं हुई थी। इसका एक कारण तो यह था कि जब से हाशिम ने क़ुरैश के व्यापारिक क़ाफ़िले के लिए यमन और रोम के रास्ते खुलवाये थे, क़ुरैश के लोगों ने दुनिया घूमकर यह देखा था कि लड़ाई-झगड़े के बिना भी किसी समस्या को हल किया जा सकता है। इसी बीच मक्का में एक ऐसी अप्रिय घटना घटित हो गयी, जिसने मक्का के आत्म-सम्मान रखने वाले प्रतिष्ठित लोगों को झिंझोड़ डाला।

यमन के एक व्यापारी ने मक्का के एक व्यक्ति के हाथ कुछ क़ीमती सामान बेचा। मक्कावासी ने सामान पर तो क़ब्ज़ा कर लिया, लेकिन उनकी क़ीमत चुकाने से मुकर गया। मक्का के 'सहम' नाम के क़बीले का वह व्यक्ति जानता था कि व्यापारी यहां अपरिचित है और मक्का में उसका न कोई समर्थक है न संरक्षक, इसलिए उसे यक़ीन था कि उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकेगा। लेकिन वह व्यापारी भी शान्त नहीं बैठा उसने मक्का की पहाड़ी पर खड़े होकर ज़ोर-ज़ोर से क़ुरैश से इन्साफ़ की गुहार लगायी।

क़ुरैश के गणमान्य व्यक्ति, जिनमें अब्दुल मुत्तलिब के बेटे ज़ुबैर अग्रनी थे खड़े हुए और उन्होंने विभिन्न क़बीले के लोगों को एकजुट किया। एक क़बीले के सरदार ने अपना बहुत बड़ा मकान लोगों को मिल-बैठने के लिए दे दिया। लम्बे वाद-विवाद के बाद तय पाया कि पीड़ितों और अधीनस्थों की सहायता के लिए समिति बनायी जाए, जिसके माध्यम से न्याय स्थापित किया जाए और कमज़ोर वर्ग को सुरक्षा प्रदान की जाए। सभी ने काबे में आकर इसके लिए शपथ उठायी। इस सभा में युवा मुहम्मद भी मौजूद थे। इस समिति ने सबसे पहले उस यमनी व्यापारी का बक़ाया उसे दिलवाया।



Whatsapp (9818799223) your complete address with screenshot of payment

ईमानदारी और नैतिकता

हज़रत मुहम्मद की उम्र 20 वर्ष हो चुकी थी। एक आदर्श युवक में जितने गुण होने चाहिएं सब उनमें मौजूद थे। उनका व्यक्तित्व बहुत ही सुन्दर और आकर्षक था। ईमानदारी और नैतिकता भी उनमें सबसे ज़्यादा पायी जाती थी। वे बहुत उदार हृदयी और लोगों का बहुत ख़याल रखने वाले युवक थे। हरेक का आदर करते, हरेक को सम्मान देते। पड़ोसियों से उनकी ज़रूरतें पूछ-पूछकर उनके काम आते। बूढ़ों, बच्चों और बेसहारा लोगों का सहारा बनते। मुहम्मद की सच्चाई और ईमानदारी की चर्चा दूर-दूर तक फैल गयी। उन्होंने कभी किसी से झगड़ा नहीं किया, किसी को बुरा-भला नहीं कहा, गाली का एक शब्द भी उनकी ज़ुबान पर नहीं आया। मुहम्मद के इन्हीं गुणों के कारण मक्का वालों ने उनका नाम सादिक़ (सच्चा) और अमीन (आमनतदार) रख दिया। कोई जब कहीं जाने लगता तो अपनी क़ीमती चीज़ें मुहम्मद के पास रख जाता इस विश्वास के साथ कि जब भी वापस लेना चाहे मिल जाएगी।

उसी ज़माने में हज़रत मुहम्मद के क़रीब और दूर के रिश्तेदार उन्हें अपने साथ व्यापारिक यात्राओं पर ले जाने लगे। फिर कुछ दूसरे लोगों ने भी उन्हें अपने व्यापार में साझी बनाया। क़ैस-बिन-साइब कहते हैं कि उस ज़माने में मैंने भी मुहम्मद को अपने साथ व्यापार में साझी बनाया था। वे एक बेहतरीन साझी साबित हुए। न उन्होंने कभी किसी बात को टाला, न हमारा किसी बात में मतभेद हुआ और न कभी झगड़ा। मैंने लेन-देन में उतना पारदर्शी आदमी कोई और नहीं देखा।

उन्हीं दिनों एक व्यापारी, जो अब स्वयं व्यापारिक यात्रा के लिए सक्षम नहीं था, ने इच्छा जतायी कि मुहम्मद उसकी व्यापार सामग्री लेकर यात्रा पर जाएं। उन्होंने जिस ईमानदारी और पारदर्शिता के साथ मामला किया उससे वह बूढ़ा व्यापारी बहुत ख़ुश हुआ। इस व्यापार में दोनों ही पक्षों को भरपूर लाभ हुआ। इसके बाद मुहम्मद के पास प्रोक्सी व्यापार के लिए एक से बढ़कर एक ऑफ़र आने लगे। इस व्यापार से उनकी आर्थिक स्थिति बेहतर हो गयी।

मक्का के बड़े व्यापारियों में एक महिला भी थीं, जिनका नाम था ख़दीजा। वे क़ुरैश के एक संभ्रांत परिवार से थीं। उनके पति की मौत हो गयी तो उन्होंने दूसरी शादी कर ली, लेकिन कुछ समय बाद दूसरे पति की भी मौत हो गयी। वे किसी को मुआवज़े पर रखकर व्यापार करने लगीं। मुहम्मद की सच्चाई और ईमानदारी की ख़बर ख़दीजा तक भी पहुंची। ख़दीजा ने हज़रत मुहम्मद को व्यापार के लिए सीरिया जाने के लिए कहला भेजा। हज़रत मुहम्मद ने इसे स्वीकार कर लिया जब वे जाने लगे तो ख़दीजा ने अपना एक सेवक भी उनके साथ लगा दिया।

हज़रत मुहम्मद जब सीरिया से वापस मक्का आये तो ख़दीजा ने अपने माल में ऐसी बरकत देखी जो इससे पहले नहीं देखी थी। दूसरी ओर उनके सेवक मैसरा ने भी हज़रत मुहम्मद के सद्व्यवहार, शालीनता, सज्जनता, सच्चाई और पारदर्शिता के बारे में अपने अनुभव ख़दीजा को बताये, तो ख़दीजा को लगा कि उन्हें जिसकी तलाश थी वह मिल गया है।

शादी

हालांकि अब उन्होंने आगे शादी न करने का फ़ैसला कर लिया था और इसलिए वे कई बड़े-बड़े सरदारों और रईसों के रिश्ते ठुकरा चुकी थीं। हज़रत मुहम्मद से प्रभावित होकर उन्होंने अपना फ़ैसला बदल दिया और अपनी एक सहेली के ज़रिए मुहम्मद के पास शादी का पैग़ाम भेजा। हज़रत मुहम्मद ने अपने चचा अबू-तालिब से अनुमति लेकर इस रिश्ते को स्वीकार कर लिया। उस समय ख़दीजा की उम्र चालीस वर्ष थी और हज़रत मुहम्मद की पच्चीस वर्ष। दोनों की शादी हो गयी और हज़रत मुहम्मद ने मह् र में बीस ऊंट दिये।

शादी के बाद हज़रत मुहम्मद अपने चचा के घर को छोड़कर अपनी पत्नी ख़दीजा के घर ही रहने लगे। ख़दीजा उनकी केवल पत्नी ही नहीं थीं, बल्कि बेहतरीन मित्र और सहयोगी भी थीं। साथ ही वे हज़रत मुहम्मद ही जैसी विचारधारा और रुझान भी रखती थीं। ख़दीजा से हज़रत मुहम्मद की छः संतानें हुईं। सबसे पहले एक लड़का क़ासिम, जिसकी अगले ही वर्ष मौत हो गयी। फिर एक के बाद एक चार बेटियां ज़ैनब, रुक़ैया, उम्मे कुलसूम और फ़ातिमा और आख़िर में फिर एक बेटा इबराहीम हुआ जो बहुत ही कम दिनों तक जीवित रहा। ■■

श्रम सम्मान

- हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने मेहनत की कमाई को प्रोत्साहित किया तथा श्रम को सम्मान दिया। नबी (सल्ल.) के एक अनुयायी थे सअद अनसारी, जब उन्होंने हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) से हाथ मिलाया तो आपने देखा कि उनके हाथ कठोर थे। कारण पूछा तो उन्होंने बताया कि दिन भर फावड़ा चलाता हूं। आपने उनके हाथ चूम लिए और कहा, "यह हथेलियां अल्लाह को प्यारी हैं, इन्हें आग स्पर्श नहीं करेगी।"
- दासों को भाई कहा गया, तो श्रमिक भी भाई हुए।
- मज़दूरों की सामर्थ्य से अधिक कार्य न लिया जाए।
- मज़दूर (श्रमिक) की मज़दूरी तथा अन्य शर्तें पहले तय की जाएं।
- मज़दूर की मज़दूरी उसका पसीना सूखने से पूर्व अदा कर दी जाए। अर्थात् शीघ्र दी जाए, इसमें वेतन का समय से भुगतान भी सम्मिलित है।
- अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने कहा कि अल्लाह फ़रमाता है, "प्रलय के दिन मैं तीन आदमियों का दुश्मन हूंगा–उसमें एक वह जिसने मज़दूर से मेहनत पूरी कराई फिर उसकी मज़दूरी नहीं दी।

(हदीस : बुख़ारी)

श्रमिकों और कर्मचारियों को भी निर्देश है कि वे ईमानदारी से कार्य करें और मालिक को हानि न पहुंचाएं। इस प्रकार श्रम बनाम पूंजीपति जो वर्ग-संघर्ष भड़काया जाता है इस्लाम उसकी जड़ काट देता है। हड़ताल और तालाबन्दी का इलाज सिर्फ़ यही सिद्धान्त हैं।

ख़ुशहाली का वादा

रहेगी कब तलक वादों में क़ैद ख़ुशहाली,
हर एक बार ही कल क्यों? कभी तो आज भी हो।

हर एक घर में दिया भी जले, अनाज भी हो,
अगर न हो कहीं ऐसा, तो एतराज़ भी हो।


"ऐ आदम की संतान, हर इबादत के अवसर पर अपनी सज्जा से सुशोभित रहो और खाओ-पियो और सीमा से आगे न बढ़ो, अल्लाह सीमा से आगे बढ़ने वालों को पसन्द नहीं करता।"
(क़ुरआन, 7:31)
A Well Wisher
Arfan Khan (Mapusa, Goa)

चिंतन

स्वयं से विश्वासघात

❖इनायतुल्लाह सुब्हानी

आज का इन्सान हो या कल का, वह ईश्वर की दी हुई सारी नेमतों से दिल खोलकर फ़ायदा उठाता है और उससे आनन्दित होता है, मगर जब उसके भेजे हुए दीन (धर्म), और उसके द्वारा उतारे गए ग्रन्थ पवित्र क़ुरआन को मानने की बात आती है, तो उसके दिल व दिमाग़ के सारे दरवाज़े बन्द हो जाते हैं। वह अपने अन्दर उसके लिए कोई आमादगी नहीं पाता।

वह कहता है, यह तो मुसलमानों की किताब है ! हमारे लिए इस किताब में क्या रखा है ? कहने वाले इस तरह की बातें क्यों कहते हैं ? शायद इसकी वजह यह है कि उन्होंने इस्लाम और क़ुरआन की सही तस्वीर नहीं देखी। उन्हें इस्लाम धर्म और क़ुरआन की वह तस्वीर देखने को मिली, जिसमें उन्हें ख़ुदा की रहमत और मुहब्बत के जलवे नज़र नहीं आए। उन्हें इस धर्म में ईश्वर की महानता के वे जलवे नज़र नहीं आए, जो जलवे उन्हें सूरज की किरणों, चांद की चांदनियों, तारों की झुरमुटों, सुबह के झोकों और बारिश की बूंदों में नज़र आए।

लिहाज़ा इन सारी नेमतों के बारे में तो उन्हें यह यक़ीन होता है कि यह उनके पालनहार की दी हुई नेमतें हैं, मगर उस दीन और उस क़ुरआन के बारे में यह समझना उनके लिए मुश्किल होता है कि यह उनके पालनहार का भेजा हुआ धर्म और उनके रब की भेजी हुई किताब है। ऐसा क्यों है ? इसके कई कारण हो सकते हैं।

इसकी एक वजह तो यह हो सकती है कि इस्लाम धर्म और क़ुरआन के रूप में जो नेमत हासिल होती है, वह सीधे तौर पर नहीं हासिल होती, बल्कि किसी माध्यम से हासिल होती है, जबकि दूसरी सारी नेमतें ऐसी होती हैं, जिनके और इन्सान के बीच कोई दूसरा माध्यम नहीं होता, इन्सान सीधे तौर पर उन्हें अपनी आंखों से देखता है, भौतिक रूप में उन्हें महसूस करता है और सीधे तौर पर उनसे लाभान्वित होता है। इस्लाम और क़ुरआन के बारे में अक्सर ऐसा होता है कि इन्सान इस नेमत को शक व शुब्हे की निगाह से देखता है और उससे दूर हो जाता है। इस्लाम और क़ुरआन का मामला ज़्यादातर ऐसा ही रहा है, लोगों ने इस सिलसिले में अपनी बुद्धि का कम इस्तेमाल किया है, स्वार्थियों और आराजक तत्वों के झूठे प्रोपेगन्डों का असर ज़्यादा लिया है।

इस्लाम और क़ुरआन से बेपरवाही की एक दूसरी वजह यह भी हो सकती है कि यह नेमत ऐसी होती है, जो न हाथों से छुई जा सकती है, न आंखों से देखी जा सकती है, बल्कि यह दिल व दिमाग़ से समझी और महसूस की जाती है, और दिल व दिमाग़ को सही तौर से इस्तेमाल करना और किसी मामले में सही नतीजे तक पहुंचना सबके बस की बात नहीं होती।

एक तीसरी वजह यह भी हो सकती है कि उसकी लज़्ज़त और उसकी बरकत फ़ौरन हासिल नहीं होती, वजह यह है कि इस्लाम एक ऐसी जीवन व्यवस्था है, जो सम्पूर्ण जीवन पर हावी है, और जब तक पूरी ज़िन्दगी इस रंग में रंग न जाए, उसकी लज़्ज़त पाना, और उसकी बरकतों से मालामाल होना मुम्किन नहीं होता, उसके लिए बहुत कुछ मेहनत और परिश्रम करना होता है। विभिन्न प्रकार की क़ुर्बानियां देनी होती हैं। इम्तेहान और परीक्षण के विभिन्न चरणों से गुज़रना होता है।

हिन्दू भाईयों या जो लोग मुसलमान नहीं हैं उनको क्या कहा जाए? यहां तो हालत यह है कि वह मुसलमान जिनको नेमते-इस्लाम और नेमते-क़ुरआन अपने बुज़ुर्गों से विरासत में मिली है, वह भी उसकी महानता से अनभिज्ञ हैं। वह मुसलमान होते हुए भी इस्लाम की लज़्ज़त से बेख़बर और क़ुरआन की रोशनी से अपरिचित रहते हैं।

दुनिया को यह जानना चाहिए कि ये दीने-इस्लाम (इस्लाम धर्म) मुसलमानों के लिए नहीं, बल्कि सारे इन्सानों के लिए आया है, यह क़ुरआन पाक मुसलमानों के लिए नहीं, बल्कि सारे इन्सानों के लिए उतारा गया है। बिल्कुल इसी तरह जिस तरह सूरज की रोशनी और चांद की चांदनी सिर्फ़ मुसलमानों के लिए नहीं, बल्कि सारे इन्सानों के लिए होती

है, यह अलग बात है कि कौन इस नेमत की क़दर करता है और कौन नाक़दरी करता है।

यह इस्लाम उन लोगों का भी है, जिन्होंने इसे क़ुबूल किया और उन लोगों का भी है जिन्होंने इसे ठुकरा दिया। यह पवित्र क़ुरआन उन लोगों का भी ग्रंथ है जिन्होंने उसे पहचाना और सीने से लगाया और उन लोगों का भी ग्रन्थ है जिन्होंने उसे ठुकरा दिया और उससे मुंह फेर लिया।

जिस समय पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) का आगमन हुआ, और पवित्र क़ुरआन अवतरित हुआ, और आपने इस्लाम का आमंत्रण दिया, उस समय पवित्र क़ुरआन का पहला संबोधन ग़ैर-मुस्लिम और मूर्तिपूजक समाज से था, फिर यह क्योंकर मुम्किन था कि उसकी शिक्षाओं में हिन्दू-मुस्लिम या मुस्लिम या ग़ैर-मुस्लिम का भेदभाव होता?

बुनियादी तौर पर सारे इन्सान अल्लाह के बन्दे और उसकी रचना हैं, इस हैसियत से वह अल्लाह की निगाह में बराबर हैं और उसकी सारी नेमतों में बराबर से शरीक हैं। इसी प्रकार इन्सान चाहे वह हिन्दू हों या पारसी, यहूदी हों या ईसाई या मुस्लिम, सब एक मां-बाप, यानी हज़रत आदम और हज़रत हव्वा की सन्तान हैं, इस प्रकार वह मुस्लिम हों या ग़ैर-मुस्लिम मर्द हों या औरत, सब आपस में भाई-भाई या भाई-बहन हैं।

ईश्वर ने अपनी प्रिय पुस्तक क़ुरआन में स्पष्ट शब्दों में इस हक़ीक़त की व्याख्या कर दी है, और उसके नतीजे में इन्सान की जो ज़िम्मेदारी होती है, उससे भी सचेत कर दिया है–

"ऐ लोगो! अपने रब से डरो, जिसने तुमको एक जीव से पैदा किया और उसी जाति का उसके लिए जोड़ा पैदा किया और दोनों से बहुत-से पुरुष और स्त्रियां फैला दीं। ईश्वर का डर रखो, जिसका वास्ता देकर तुम एक-दूसरे के सामने अपनी मांगें रखते हो। और नाते-रिश्तेदारों का भी तुम्हें ख़याल रखना है। निश्चय ही ईश्वर तुम्हारी निगरानी कर रहा है।"

(क़ुरआन, 4:1)

पवित्र क़ुरआन कभी भी ग़ैर-मुस्लिमों से नफ़रत करना नहीं सिखाता, इसके विपरीत वह सारे इन्सानों को एक-दूसरे का भाई बताता है। एक ज़माना था कि इस्लाम सूरज की रोशनी और चांद की चांदनी की तरह देखते-देखते पूरी दुनिया में फैल गया, इस तेज़ी के साथ पूरी दुनिया में उसके फैल जाने की इसके अलावा और कोई वजह न थी कि उसने दुनिया को शक्ति एवं प्रेम और सम्मान और स्वतन्त्रता का संदेश दिया। उस वक़्त सारी मानवता ज़ुल्म और अन्याय की चक्की में पिस रही थी, अत्यंत बेबसी के साथ कराह रही थी, इस्लाम ने उन अत्याचारियों के अत्याचार और फ़सादियों के फ़साद से मुक्ति दिलाई।

शासक वर्ग के अलावा हर इन्सान ग़ुलामी की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था, इस्लाम ने वह सारी बेड़ियां काट दीं, और हर इन्सान को उसकी खोयी हुई आज़ादी वापस दिलाई। ईश्वर ने हर इन्सान को इज़्ज़त की चादर पहनाई है, चाहे वह, किसी भी धर्म जाति या संप्रदाय का हो। पवित्र क़ुरआन का स्पष्ट ऐलान है–

"हमने आदम की संतान को श्रेष्ठता प्रदान की और उन्हें थल और जल में सवारी दी और अच्छी पाक चीज़ों से उन्हें रोज़ी दी और अपने पैदा किए हुए बहुत से प्राणियों की अपेक्षा उन्हें श्रेष्ठता प्रदान की।" (क़ुरआन, 17:70)

स्वार्थी और निर्दयी अत्याचारियों के अत्याचार से वह चादर तार-तार हो चुकी थी, इस्लाम ने आदम की औलाद को वह क़ीमती चादर फिर से पहना दी, इस तरह ज़ुल्म व ज़्यादती के पैरों से रौंदी और कुचली हुई मानवता दुबारा जीवन की महानता से परिचित हो गयी, और दुबारा जीवन की शक्तियों से माला-माल हो गयी। इस्लाम को अगर कोई अपने लिए ख़तरा समझ रहा है तो यह उसकी ग़लतफ़हमी है, बल्कि सही बात यह है कि उसकी ख़ुद-फ़रेबी है, ईश्वर का भेजा हुआ दीन (धर्म) किसी भी क़ौम, किसी भी देश के लिए ख़तरा नहीं हो सकता।

आज जिन भयानक और बर्बाद कर देने वाले ख़तरों की आंधियां चल रही हैं, और जिन मुसीबतों के बादल सारी मानवता के सरों पर मंडरा रहे हैं, इन सारे ख़तरों और इन सारी बलाओं से निकलने का मात्र अकेला रास्ता यही इस्लाम है। इस दुनिया को बनाने-सजाने वाले ख़ुदा ने, और इसमें इन्सान को बसाने वाले मेहरबान रब ने इस्लाम धर्म को अपने बन्दों को किसी ख़तरे में डालने के लिए नहीं भेजा है, बल्कि उन्हें अपमान और तिरस्कार से निकाल कर सम्मान और सफलता से हमकिनार करने के लिए भेजा है। कहने वाले ने कितनी सही बात कही है–

ख़ुद फ़रेबी की ये दीवार अगर गिर जाती,
आज इन्सान के दामन में सितारे होते।

■■

इक्कीसवीं सदी में धर्म और उसकी प्रासंगिकता

❖एफ. ए. मुजीब

इक्कीसवीं सदी को लंबे समय तक वैज्ञानिक प्रगति, डिजिटल क्रांति और तेज़ी से बढ़ते धर्मनिरपेक्ष रुझानों का युग कहा जाता रहा है। पूरे आत्मविश्वास के साथ यह दावा भी किया गया कि आधुनिकता के साथ धर्म मानव जीवन से अप्रासंगिक हो जाएगा। लेकिन वैश्विक वास्तविकताएं, सामाजिक अवलोकन और विश्वसनीय आंकड़े इस धारणा की कोई पुष्टि नहीं करते। सच्चाई यह है कि आज भी धर्म मानव समाज में एक शक्तिशाली वैचारिक, नैतिक और सामाजिक शक्ति के रूप में मौजूद है—बल्कि कुछ पहलुओं में उसकी प्रासंगिकता पहले से अधिक स्पष्ट हो गई है।



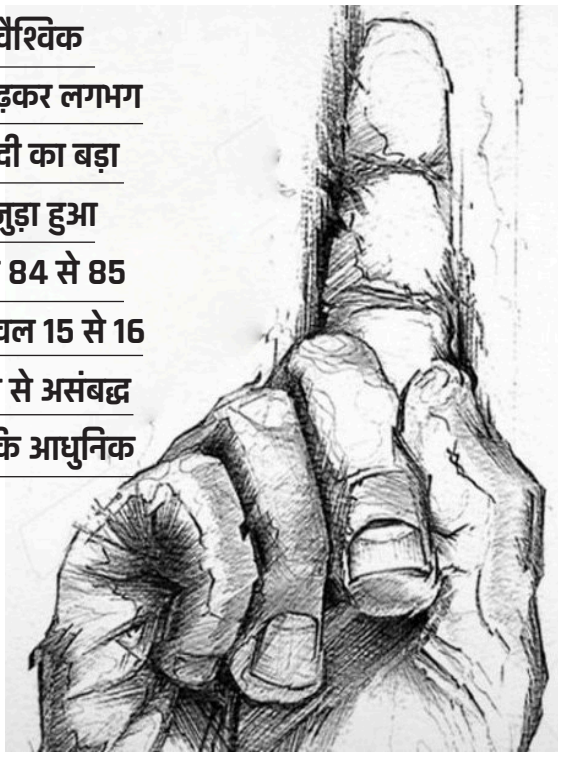
प्यू (PEW) रिसर्च सेंटर के अनुसार, वर्ष 2020 में वैश्विक जनसंख्या लगभग 7.8 अरब थी, जो 2026 तक बढ़कर लगभग 8.1 से 8.3 अरब के बीच पहुंच चुकी है। इस आबादी का बड़ा हिस्सा आज भी किसी न किसी धार्मिक पहचान से जुड़ा हुआ है। उपलब्ध आंकड़े बताते हैं कि दुनिया की लगभग 84 से 85 प्रतिशत आबादी किसी धर्म से संबद्ध है, जबकि केवल 15 से 16 प्रतिशत लोग स्वयं को ग़ैर-धार्मिक या धार्मिक रूप से असंबद्ध बताते हैं। यह तथ्य इस विचार को चुनौती देता है कि आधुनिक दुनिया सामूहिक रूप से धर्म से दूर हो चुकी है।

यदि विश्व के कुछ बड़े धर्मों की वर्तमान स्थिति पर नज़र डालें तो ईसाई धर्म अब भी दुनिया का सबसे बड़ा धर्म है। वर्ष 2020 में इसके अनुयायियों की संख्या लगभग 2.3 अरब थी, जो वैश्विक जनसंख्या का लगभग 28.8 प्रतिशत बनती है। यूरोप, अमेरिका, अफ़्रीक़ा और लैटिन अमेरिका में इसकी गहरी जड़ें ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और प्रचारात्मक कारणों का परिणाम हैं। यद्यपि संख्यात्मक रूप से इसके अनुयायियों में वृद्धि हुई है, लेकिन वैश्विक अनुपात में इसके प्रतिशत में हल्की कमी देखी गई है, जिसे पश्चिमी समाजों में बढ़ती धर्मनिरपेक्षता से जोड़ा जाता है। अगर इस्लाम धर्म की बात करें तो लगभग 2.1 अरब अनुयायियों के साथ इस्लाम दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा धर्म है और वैश्विक जनसंख्या का लगभग 25.6 प्रतिशत हिस्सा इससे जुड़ा हुआ है। हाल के दशकों में इस्लाम को दुनिया का सबसे तेज़ी से फैलने वाला बड़ा धर्म माना गया है। उल्लेखनीय यह है कि यह रुझान केवल पारंपरिक मुस्लिम समाज तक सीमित नहीं है, बल्कि यूरोप, अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया और अन्य पश्चिमी क्षेत्रों में भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, जहां हज़ारों लोग व्यक्तिगत अध्ययन, वैचारिक खोज और आध्यात्मिक तृष्णा के परिणामस्वरूप इस्लाम स्वीकार कर रहे हैं।

इस्लाम स्वीकार करने वालों के बयानों के अनुसार, इस रुझान का मुख्य कारण इस्लाम का सरल, स्पष्ट एकेश्वरवादी (तौहीद) सिद्धांत है—एक ईश्वर, बिना साझेदार और बिना मध्यस्थ। आधुनिक मानव, जो जटिल धार्मिक अवधारणाओं और वैचारिक विरोधाभासों से ऊबा हुआ प्रतीत होता है, इस सादगी में मानसिक और आध्यात्मिक शांति का अनुभव करता है। इसके साथ ही, इस्लाम का एक संपूर्ण जीवन-व्यवस्था होना, क़ुरआन का तर्कसंगत और नैतिक विमर्श, मानव समानता, सामाजिक न्याय और वैश्विक भाईचारे की अवधारणा उन लोगों को प्रभावित करती है जो अपने जीवन में एक उद्देश्य और अर्थ की तलाश में होते हैं।

हिंदू धर्म दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा धर्म है, जिसके अनुयायियों की संख्या लगभग 1.2 अरब है, जो वैश्विक

प्यू (PEW) रिसर्च सेंटर के अनुसार, वर्ष 2020 में वैश्विक जनसंख्या लगभग 7.8 अरब थी, जो 2026 तक बढ़कर लगभग 8.1 से 8.3 अरब के बीच पहुंच चुकी है। इस आबादी का बड़ा हिस्सा आज भी किसी न किसी धार्मिक पहचान से जुड़ा हुआ है। उपलब्ध आंकड़े बताते हैं कि दुनिया की लगभग 84 से 85 प्रतिशत आबादी किसी धर्म से संबद्ध है, जबकि केवल 15 से 16 प्रतिशत लोग स्वयं को ग़ैर-धार्मिक या धार्मिक रूप से असंबद्ध बताते हैं। यह तथ्य इस विचार को चुनौती देता है कि आधुनिक दुनिया सामूहिक रूप से धर्म से दूर हो चुकी है।



जनसंख्या का लगभग 14.9 प्रतिशत बनती है। यह धर्म मुख्यतः भारत, नेपाल और दक्षिण-पूर्व एशिया में केंद्रित है। हिंदू धर्म किसी एक सिद्धांत तक सीमित नहीं, बल्कि दर्शन, अनुष्ठानों और आध्यात्मिक अवधारणाओं का एक व्यापक और विविध समुच्चय है।

बौद्ध धर्म के अनुयायियों की संख्या लगभग 324 मिलियन बताई जाती है, जो वैश्विक जनसंख्या का लगभग 4.1 प्रतिशत है। पूर्वी और दक्षिण-पूर्व एशिया में इस धर्म की गहरी जड़ें हैं, हालांकि कुछ क्षेत्रों में इसकी संख्यात्मक स्थिति स्थिर या थोड़ी कम हुई है।

दुनिया में एक बड़ा वर्ग ऐसा भी है जो स्वयं को किसी धर्म से जुड़ा हुआ नहीं मानता। ग़ैर-धार्मिक या धार्मिक रूप से असंबद्ध लोगों की संख्या लगभग 1.3 अरब है, जिनमें नास्तिक, अज्ञेयवादी और वे लोग शामिल हैं जो किसी धार्मिक संस्था से जुड़े बिना व्यक्तिगत आध्यात्मिकता में विश्वास रखते हैं। यूरोप, उत्तरी अमेरिका और पूर्वी एशिया में यह रुझान अधिक स्पष्ट है, जिसे विशेषज्ञ सामाजिक परिवर्तन और संस्थागत धर्म से दूरी के संदर्भ में देखते हैं—न कि आस्था के पूर्ण अंत के रूप में।

इन प्रमुख धर्मों के अतिरिक्त, दुनिया में अन्य धर्म और पंथ भी करोड़ों लोगों के जीवन का हिस्सा हैं। सिख धर्म, यहूदी धर्म, जैन धर्म, बहाई धर्म, ताओ धर्म, कन्फ्यूशियन धर्म, शिंतो और ज़रथ्रुष्ट धर्म जैसे मतों के अनुयायियों की संयुक्त संख्या लगभग 170 मिलियन के आसपास है, जो वैश्विक धार्मिक विविधता को दर्शाती है।

यदि धर्म के इतिहास और वर्तमान वैश्विक रुझानों को एक साथ देखा जाए, तो यह तथ्य सामने आता है कि धर्म—विशेषकर एकेश्वरवादी धर्म—सदैव मानव जीवन के बुनियादी प्रश्नों के उत्तर प्रदान करते रहे हैं। इस्लाम में एकेश्वरवाद केवल एक आस्था नहीं, बल्कि नैतिक दायित्व, मानव समानता और उत्तरदायित्व का स्रोत है। यही अवधारणा मनुष्य को यह बोध कराती है कि वह केवल समाज के प्रति ही नहीं, बल्कि एक उच्च, न्यायपूर्ण और सर्वज्ञ ईश्वर के प्रति भी उत्तरदायी है।

वास्तविकता यह है कि आधुनिक दुनिया में धर्म की भूमिका समाप्त नहीं हुई है; उसकी प्रकृति परिवर्तित हुई है। आज का मनुष्य विरासत में मिले विश्वासों की बजाय सचेत चयन की ओर अग्रसर है। इस्लाम, ईसाई धर्म, बौद्ध धर्म या ग़ैर-धार्मिक पहचान—हर दिशा में यह खोज मूलतः अर्थ, उद्देश्य और आंतरिक शांति की तलाश है।

वैश्विक धार्मिक परिदृश्य स्पष्ट रूप से यह संकेत देता है कि आधुनिकतम वैज्ञानिक और भौतिक प्रगति के बावजूद मनुष्य आध्यात्मिक प्रश्नों से विमुख नहीं हुआ है। यही कारण है कि धर्म—और विशेषकर एकेश्वरवादी विचार—आज भी वैश्विक विमर्श के केंद्र में है और भविष्य में भी मानव समाज की वैचारिक और नैतिक दिशा को प्रभावित करता रहेगा। ■■

संवाद की सार्थकता

❖सुफ़ियान अहमद

"अपने रब के मार्ग की ओर तत्वदर्शिता और सदुपदेश के साथ बुलाओ और उनसे ऐसे ढंग से वाद-विवाद करो जो उत्तम हो। तुम्हारा रब उसे भली-भांति जानता है जो उसके मार्ग से भटक गया और वह उन्हें भी भली-भांति जानता है जो संमार्ग पर हैं।" (क़ुरआन, 16:125)

संवाद और बहस मानव बुद्धि के महत्वपूर्ण उपकरण हैं। मानव सभ्यता का इतिहास विचारों के आदान-प्रदान और संवाद से ही आगे बढ़ा है। तर्क के माध्यम से सत्य तक पहुंचने की कोशिश समाज को जीवंत बनाए रखती है। संवाद यदि सही उद्देश्य के साथ किए जाएं, तो वे समाज को बौद्धिक रूप से समृद्ध कर सकते हैं। लोगों को सोचने, प्रश्न करने और आत्म-मंथन की ओर प्रेरित कर सकते हैं।

> **संवाद जब नैतिक दायरे से बाहर चला जाता है, तब शोर शुरू होता है; और जब शोर हावी हो जाता है, तब विवेक हाशिये पर चला जाता है। शायद यही कारण है कि इस्लामी परंपरा में संवाद (Dialogue) और बहस (Debate) को भी एक नैतिक दायरे में रखा गया है। बहस का उद्देश्य यह नहीं कि सामने वाले को नीचा दिखाया जाए, बल्कि यह कि सत्य को अधिक स्पष्ट किया जाए। संवाद, प्रश्न और तर्क करना विश्वास को कमज़ोर नहीं करता, बल्कि उसे और अधिक स्पष्ट करता है।**

बीते माह हमने देखा कि ईश्वर के अस्तित्व को लेकर हुई बहस मीडिया और सोशल मीडिया पर काफ़ी चर्चित रही। बुद्धिजीवी वर्ग ने इस बहस को धर्म, आस्था और तर्क के बीच संवाद की एक कोशिश के रूप में देखा और सराहा, साथ ही आम लोगों की मिली-जुली प्रतिक्रियाएं भी सामने आईं।

किसी भी विषय पर एक स्वस्थ संवाद मनुष्य के विवेक को विस्तार दे सकता है। मनुष्य को अपने विश्वासों पर प्रश्न करने का न केवल अधिकार है, बल्कि यह उसकी बौद्धिक ज़िम्मेदारी भी है। आस्था और तर्क एक-दूसरे के शत्रु नहीं, बल्कि साझेदार हैं। एक अच्छा संवाद सत्य तक पहुंचने का मार्ग खोलता है। मानव समाज में बौद्धिक और तर्कात्मक संवाद होते रहने चाहिए, लेकिन उनकी नैतिक दिशा तय करना भी अनिवार्य है।

संवाद जब नैतिक दायरे से बाहर चला जाता है, तब शोर शुरू होता है; और जब शोर हावी हो जाता है, तब विवेक हाशिये पर चला जाता है। शायद यही कारण है कि इस्लामी परंपरा में संवाद (Dialogue) और बहस (Debate) को भी एक नैतिक दायरे में रखा गया है। बहस का उद्देश्य यह नहीं कि सामने वाले को नीचा दिखाया जाए, बल्कि यह कि सत्य को अधिक स्पष्ट किया जाए। संवाद, प्रश्न और तर्क करना विश्वास को कमज़ोर नहीं करता, बल्कि उसे और अधिक स्पष्ट करता है।

धर्म, मूल रूप से, मनुष्य को नैतिकता, संयम और विवेक सिखाने आया है। धर्म दूसरों को अपमानित करने की नहीं, बल्कि सत्य की ओर मार्गदर्शन करने की बात करता है। सच्ची धार्मिक समझ वही है जो इंसान को विनम्र बनाती है, उसे दूसरों की बात सुनने की क्षमता देती है और सत्य की तलाश में ईमानदार रखती है।

यह समझना ज़रूरी है कि मतभेद स्वाभाविक हैं। हर इंसान का अनुभव, अध्ययन और दृष्टिकोण अलग होता है। इसलिए यह अपेक्षा करना कि सभी एक ही निष्कर्ष पर पहुंचें, न तो व्यावहारिक है और न ही आवश्यक। आज के

सार्वजनिक विमर्श में असहमति को अक्सर दुश्मनी मान लिया जाता है। विचारों का टकराव व्यक्तिगत हमलों में बदल जाता है। जबकि नैतिक परंपरा यह सिखाती है कि विचारों से असहमति हो सकती है, व्यक्ति से नहीं।

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के जीवन में संवाद की अनेक मिसालें मिलती हैं। उन्होंने विरोधियों, प्रश्नकर्ताओं और आलोचकों से भी शालीनता के साथ बात की। उनके संवाद का उद्देश्य सदैव लोगों में समझ पैदा करने का था।

जब संवाद नैतिकता से मुक्त हो जाता है, तो वह ज्ञान का साधन नहीं, बल्कि हास-परिहास और उपहास का साधन बन जाता है। यही कारण है कि इस्लामी बौद्धिक परंपरा में मुनाज़रा (Debate) से अधिक मुकालमा (Dialogue) को महत्व दिया गया।

क़ुरआन की उपरोक्त आयत संवाद को तीन आधार देती है—बुद्धिमत्ता, नैतिकता और श्रेष्ठ शैली। यहां बहस को निषेध नहीं किया गया, बल्कि उसकी दिशा निर्धारित की गई है। यह आयत संकेत करती है कि संवाद तब तक मूल्यवान है, जब तक वह सम्मान, संयम और सत्य-खोज की भावना से जुड़ा हो।

व्यक्तिगत स्तर पर संवाद आत्मावलोकन का माध्यम है। मनुष्य अपने ही विचारों को अंतिम सत्य मानने लगता है, जब तक कि उसके सामने दूसरा दृष्टिकोण नहीं आता। परिवारों में बिखराव, मित्रता में दरार और कार्यस्थलों पर तनाव— अधिकांश मामले संवादहीनता के ही परिणाम होते हैं।

इसी प्रकार सामाजिक स्तर पर भी संवाद बेहद ज़रूरी होते हैं, बहुलतावादी समाज संवाद के बिना टिक नहीं सकता। सामाजिक स्तर पर संवाद विविधता को स्वीकार करने की संस्कृति बनाता है। जब समुदायों के बीच बातचीत बंद होती है, तब पूर्वाग्रह जन्म लेते हैं और वही आगे चलकर नफ़रत की शक्ल ले लेते हैं। अतः परस्पर संवाद के पुल बनने चाहिए और संवादहीनता की दीवारें ढहनी चाहिए।

इसी प्रकार राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर भी नीति, न्याय और जनहित जैसे प्रश्नों पर सार्थक संवाद की आवश्यकता है। संवाद के अभाव में न्याय संभव नहीं, क्योंकि न्याय के लिए पहले सुनना पड़ता है—कमज़ोर की आवाज़, अल्पसंख्यक का दर्द और हाशिये पर खड़े व्यक्ति की पीड़ा।

क़ुरआन में कहा गया है–"ऐ ईमान लाने वालो ! अल्लाह के लिए गवाही देते हुए इंसाफ़ पर मज़बूती के साथ जमे रहो, चाहे वह स्वयं तुम्हारे अपने मां-बाप और नातेदारों के विरुद्ध ही क्यों न हो। कोई धनवान हो या निर्धन (जिसके विरुद्ध तुम्हें गवाही देनी पड़े) अल्लाह को उनसे (तुमसे कहीं बढ़कर) निकटता का संबंध है, तो तुम अपनी इच्छा के अनुपालन में न्याय से न हटो, क्योंकि यदि तुम हेर-फेर करोगे या कतराओगे तो, जो कुछ तुम करते हो, अल्लाह को उसकी ख़बर रहेगी।"

(क़ुरआन, 4:135)

क़ुरआन में एक अन्य स्थान पर कहा गया–"निश्चय ही अल्लाह न्याय और भलाई का आदेश देता है।"

(क़ुरआन, 16:90)

यह आदेश केवल अदालतों के लिए नहीं, बल्कि समाज के हर स्तर के लिए है, नीति-निर्माण से लेकर सार्वजनिक विमर्श तक। जब नीतियां बिना व्यापक संवाद के बनती हैं, तो वे न्याय की भावना से दूर हो जाती हैं। ऐसे परिदृश्य में संवाद की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।

आस्था और तर्क एक-दूसरे के शत्रु नहीं, बल्कि साझेदार हैं। एक अच्छा संवाद सत्य तक पहुंचने का मार्ग खोलता हैं। मानव समाज में बौद्धिक और तर्कात्मक संवाद होते रहने चाहिए, लेकिन उनकी नैतिक दिशा तय करना भी अनिवार्य है।

आज की कड़वी सच्चाई यह है कि न्याय और समानता संविधान और घोषणाओं में तो है, पर व्यवहार में नहीं। आर्थिक, जातीय, लैंगिक और सांस्कृतिक हर स्तर पर असमानता गहराती जा रही है। संवाद के मंच सिकुड़ते जा रहे हैं और निर्णय कुछ सीमित समूहों के हाथों में केंद्रित होते जा रहे हैं। अतः आज के हालात में न्याय, समता और समानता पर बौद्धिक और तर्कपूर्ण संवाद की आवश्यकता है । न्याय, समता और समानता केवल संवैधानिक घोषणाएं नहीं, बल्कि जीवित मूल्य हैं—और ये तभी जीवित रह सकते हैं, जब मानव समाज में सुनने, समझने और सम्मानपूर्वक बोलने की संस्कृति मौजूद हो। ■■

विशेष आयोजन

केंद्रीय बजट 2026-27

नए बजट में क्या हो?

❖डॉ. फ़रहत हुसैन

केंद्रीय बजट देश की अर्थव्यवस्था पर गहरा प्रभाव डालता है, इसलिए वित्त मंत्रालय अपने विशेषज्ञों के अतिरिक्त जनप्रतिनिधियों शिक्षा तथा उद्योग से जुड़े लोगों, अर्थशास्त्रियों, ट्रेड यूनियनों तथा विभिन्न संगठनों की राय भी आमंत्रित करता है। ऐसे ही कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं को यहां संकलित किया गया है :

देश के जाने-माने धार्मिक एवं सामाजिक संगठन **जमाअत-इस्लामी हिन्द** ने बजट 2026–27 के लिए प्रस्तुत एक नीतिगत ज्ञापन के माध्यम से अर्थव्यवस्था को रोज़गार, आय-सुरक्षा और मांग-विस्तार के दृष्टिकोण से पुनर्संतुलित करने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया है। इसी संदर्भ में यह राय रखी गई है कि—बजट नीति को रोज़गार-केंद्रित बनाया जाना चाहिए, ताकि आर्थिक वृद्धि को मात्र पूंजी सृजन तक सीमित न रखकर उसे व्यापक रोज़गार और आय-सुरक्षा से जोड़ा जा सके।

प्रमुख सरकारी योजनाओं और प्रोत्साहनों में रोज़गार-प्रभाव का आकलन अनिवार्य किया जाना चाहिए, जिससे रोज़गार को अप्रत्यक्ष परिणाम नहीं बल्कि प्रत्यक्ष नीति लक्ष्य के रूप में स्थापित किया जा सके। शहरी बेरोज़गारी से निपटने के लिए लक्षित शहरी कार्यक्रम शुरू किए जाने चाहिए, जो पर्यावरण, बुनियादी सेवाओं और देखभाल-आधारित कार्यों पर केंद्रित हों। ग्रामीण क्षेत्रों में ज़िला-स्तरीय ग़ैर-कृषि रोज़गार रणनीति अपनाई जानी चाहिए, जिससे स्थानीय संसाधनों पर आधारित टिकाऊ रोज़गार सृजित हों और मजबूरी में पलायन घटे। सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम (MSME) को दी जाने वाली सार्वजनिक ऋण सहायता को रोज़गार-सृजन से जोड़ा जाना चाहिए, ताकि सरकारी क्रेडिट का लाभ वास्तविक रोज़गार में बदले।

औद्योगिक प्रोत्साहनों को श्रम-घनत्व के आधार पर पुनर्गठित किया जाना चाहिए, जिससे पूंजी-प्रधान उत्पादन को संतुलित किया जा सके। कृषि नीति को इनपुट-केंद्रित सहायता से आगे बढ़ाकर आय-स्थिरीकरण (Income Stabilisation) की दिशा में ले जाया जाना चाहिए, ताकि किसानों को मूल्य-अस्थिरता से सुरक्षा मिल सके।

स्वास्थ्य नीति का प्राथमिक उद्देश्य घरेलू ख़र्च घटाना होना चाहिए, जिससे आय-सुरक्षा और उपभोग क्षमता मज़बूत हो। शिक्षा तथा रोज़गार को राज्य-समर्थित कार्यक्रमों के माध्यम से प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, विशेष रूप से शिक्षित युवाओं के लिए। अल्पसंख्यकों विशेषकर मुसलमानों के लिए लक्षित, परिणाम-आधारित हस्तक्षेप आवश्यक हैं, क्योंकि उनके सामने शिक्षा, रोज़गार और ऋण तक पहुंच में संरचनात्मक बाधाएं विद्यमान हैं।

आर्थिक मंदी या संकट के समय सक्रिय होने वाला आय-सहायता तंत्र विकसित किया जाना चाहिए, ताकि कमज़ोर वर्गों की क्रय-शक्ति सुरक्षित रहे। कर-ढांचे को अधिक प्रगतिशील बनाया जाना चाहिए, जिससे अप्रत्यक्ष करों का बोझ घटे और उच्च आय एवं संपत्ति संपन्न वर्ग से अपेक्षाकृत अधिक योगदान सुनिश्चित हो।

इस बारे में देश के सुप्रसिद्ध शिक्षाविद **सैयद तनवीर अहमद** का मत है कि वार्षिक बजट केवल सरकार का वित्तीय दस्तावेज़ नहीं, बल्कि राज्य की नैतिक दृष्टि, राजनीतिक प्राथमिकताओं और नागरिकों के प्रति उसके रवैये का सार्वजनिक प्रतिबिंब होता है। उनके अनुसार, भारत जैसे बहुलतावादी समाज में बजट को समावेशन और सामाजिक न्याय का औज़ार होना चाहिए, जिसमें ग़रीबों, वंचितों और अल्पसंख्यकों की ज़रूरतें केंद्रीय स्थान पाएं।

सैयद तनवीर के अनुसार, नए बजट में नागरिकों, विशेषकर अल्पसंख्यकों की भागीदारी को संस्थागत रूप दिया जाना चाहिए, ताकि बजट केवल नौकरशाही दस्तावेज़ न रहकर सामाजिक न्याय का प्रभावी साधन बने। वे मानते हैं कि बजट में शिक्षा, रोज़गार, कौशल विकास और उद्यमिता

जैसे क्षेत्रों में अल्पसंख्यक समुदायों की ज़रूरतों को स्पष्ट प्राथमिकता मिलनी चाहिए।

उनके अनुसार, नए बजट में ऐसे तंत्र विकसित किए जाने चाहिए जिनके ज़रिये संगठित नीति-परामर्श, ज़िला और राज्य स्तर पर सुझाव-संकलन, तथा समुदाय-आधारित प्रस्तावों को औपचारिक रूप से वित्त मंत्रालय तक पहुंचाया जा सके। उनका मत है कि यदि बजट प्रक्रिया में यह भागीदारी सुनिश्चित की गई, तो पारदर्शिता, जवाबदेही और समावेशी विकास—तीनों को मज़बूती मिलेगी।

2026-27 के केंद्रीय बजट के प्रस्तावों के लिए सुझाव देते हुए टैक्स सी.एच.आर. बार एसोसिएशन, उत्तराखंड के अध्यक्ष **एडवोकेट नदीम उद्दीन** ने अपने विचार इस प्रकार से व्यक्त किए–

आयकर रिटर्न भरने की सीमा : वर्तमान में आयकर रिटर्न ₹2.5 लाख वार्षिक आय वालों को भी भरना पड़ता है, जबकि ₹12 लाख तक की आय पर कोई आयकर देय नहीं है। इससे अनावश्यक रूप से आयकर विभाग और करदाताओं—दोनों पर काम का बोझ बढ़ता है। पैन कार्ड, बैंक खाता और आधार लिंक होने के कारण छोटे व्यापारियों एवं निम्न आय वर्ग के व्यक्तियों को भी आयकर रिटर्न दाख़िल करना पड़ता है और ऐसा न करने पर पेनल्टी लग जाती है, जबकि बड़े टैक्स चोरों की समुचित जांच तक नहीं हो पाती। इसलिए आयकर रिटर्न दाख़िल करने की न्यूनतम आय सीमा बढ़ाया जाना आवश्यक है।

शिक्षा एवं चिकित्सा के लिए अधिक बजट : सरकारी विद्यालयों और सरकारी चिकित्सा सुविधाओं के विस्तार हेतु अधिक बजट की व्यवस्था की जानी चाहिए, ताकि आम आदमी को निःशुल्क एवं उच्च स्तरीय शिक्षा तथा चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध हो सकें। आयुष्मान जैसी योजनाएं इसका पूर्ण विकल्प नहीं हो सकतीं। इन योजनाओं के कारण चिकित्सा क्षेत्र में भ्रष्टाचार में भारी वृद्धि हुई है और कई निजी अस्पताल मुनाफ़ाख़ोरी कर रहे हैं। अच्छे निजी अस्पतालों में भी अत्यधिक भीड़ होने के कारण मध्यम वर्ग को समय पर और गुणवत्तापूर्ण इलाज नहीं मिल पा रहा है।

प्रधानमंत्री आवास, लखपति दीदी आदि योजनाओं में ब्याज-मुक्त ऋण की व्यवस्था : प्रधानमंत्री आवास योजना, लखपति दीदी योजना तथा इसी प्रकार की अन्य केंद्र सरकार की योजनाओं के अंतर्गत दिए जाने वाले ऋणों पर ब्याज लिया जा रहा है। क़िस्तें समय पर न चुका पाने की स्थिति में संबंधित बैंक सरफेसी एक्ट तथा जिलाधिकारी के माध्यम से वसूली की कार्यवाही करता है, जिससे इन योजनाओं का वास्तविक उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है। इसलिए आवास एवं रोजगार से संबंधित केंद्र सरकार की योजनाओं के अंतर्गत दिए जाने वाले ऋण ब्याज-मुक्त होने चाहिए। इसकी स्पष्ट व्यवस्था बजट में की जानी चाहिए।

क़िस्तों पर वाहन, उपकरण एवं मशीनें बेचने वाले उद्योगों को बढ़ावा : बिना ब्याज वसूलने वाली फाइनेंस कंपनियों एवं बैंकों की सहायता से किस्तों पर वाहन, उपकरण और मशीनें बेचने वाले उद्योगों को बढ़ावा देने हेतु विशेष सब्सिडी की व्यवस्था बजट में की जानी चाहिए। इससे बाजार में नकदी का प्रवाह बढ़ेगा और अर्थव्यवस्था को गति मिलेगी।

टैक्स में कमी एवं ग़लती पर पेनल्टी की नीति : एक सशक्त अर्थव्यवस्था के लिए करों में कमी किया जाना आवश्यक है। इससे लोगों के हाथों में अधिक धन रहेगा, जो उपभोग और निवेश के माध्यम से अर्थव्यवस्था को मज़बूत करेगा। सरकार को अपने ख़र्चों की पूर्ति के लिए ग़लती या नियम उल्लंघन पर पेनल्टी वसूली को साधन बनाना चाहिए। इसके अतिरिक्त भ्रष्टाचारियों के विरुद्ध शीघ्र कार्यवाही कर उनकी अवैध संपत्तियां ज़ब्त करके उन्हें राजस्व का स्रोत बनाया जाना चाहिए।

सरकारी ख़र्चों में कमी : बजट में सरकार के बढ़ते खर्चों को नियंत्रित करने की स्पष्ट व्यवस्था होनी चाहिए। जिन बैठकों और कार्यों को हाइब्रिड मोड या ऑनलाइन माध्यम से किया जा सकता है, उनके लिए मंत्रियों और अधिकारियों के दौरों, यात्राओं एवं कार्यक्रमों पर पूर्ण प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए। मंत्रियों और अधिकारियों की विदेश यात्राओं को सीमित करने तथा अनावश्यक कार्यक्रमों पर होने वाले ख़र्चों में कटौती जैसी नीतियां अपनाकर सरकारी व्यय में उल्लेखनीय कमी लाई जा सकती है।

एक ओर जहां सामाजिक और नागरिक संगठनों की अपेक्षाएं बजट में समावेशन और कल्याण पर ज़ोर देती हैं, वहीं दूसरी ओर केंद्रीय बजट 2026–27 के लिए भारतीय उद्योग जगत और उद्योग संगठनों—विशेषकर CII, FICCI और ASSOCHAM जैसे संगठनों—की प्रमुख मांगें भी सामने आई हैं, जो मुख्यतः निम्नलिखित क्षेत्रों से जुड़ी हैं :

पूंजीगत व्यय में वृद्धि : उद्योग जगत ने सतत विकास को बढ़ावा देने के लिए केंद्र के पूंजीगत व्यय में 12 प्रतिशत और राज्यों को पूंजीगत सहायता में 10 प्रतिशत की वृद्धि का सुझाव दिया है।

विनिर्माण को प्रोत्साहन : घरेलू विनिर्माण को बढ़ावा देने के लिए कच्चे माल और मशीनरी पर सब्सिडी, MSMEs और स्टार्टअप के लिए कर प्रोत्साहन, और बेहतर निर्यात प्रोत्साहन उपायों की मांग की गई है।

विदेशी निवेश प्रोत्साहन : निजी और विदेशी निवेश को आकर्षित करने के लिए कर छूट या अनुपालन में ढील देने का सुझाव दिया गया है।

कर सुधार : कर प्रशासन को अधिक अनुमानित बनाने और विवादों को कम करने के लिए सुधारों की मांग की गई है।

GST से जुड़ा व्यापार ऋण : MSMEs के लिए ऋण की सुविधा को आसान बनाने के लिए GST नेटवर्क के माध्यम से चालानों और भुगतानों को जोड़ने वाले राष्ट्रीय, वास्तविक समय क्रेडिट मूल्यांकन ढांचे की मांग की गई है।

अनुपालन में आसानी : कारोबार करने में आसानी के लिए कर संरचनाओं के सरलीकरण और अनुपालन बोझ को कम करने पर ज़ोर दिया गया है।

सस्ती वित्तपोषण की सुविधा : बाहरी चुनौतियों के प्रभाव को कम करने के लिए MSMEs को उचित दरों पर ऋण प्रवाह को मज़बूत करने की मांग की गई है।

कौशल विकास : भविष्य के लिए तैयार कार्यबल बनाने हेतु प्रशिक्षण और कौशल विकास कार्यक्रमों में निवेश बढ़ाने की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

PLI योजना का विस्तार : उत्पादन से जुड़े प्रोत्साहन (PLI) योजनाओं को और अधिक उत्पादों/क्षेत्रों, जैसे खिलौने, चमड़े के सामान, और खाद्य प्रसंस्करण में विस्तारित करने का सुझाव दिया गया है।

अनुसंधान और विकास (R&D) पर ज़ोर : नवाचार को बढ़ावा देने के लिए AI जैसी उभरती प्रौद्योगिकियों में लक्षित निवेश और अनुसंधान अनुदान की मांग की गई है।

हरित प्रौद्योगिकियों के लिए समर्थन : सौर ऊर्जा जैसे नवीकरणीय क्षेत्रों में घरेलू विनिर्माण और परियोजनाओं के लिए उच्च पूंजी आवंटन और सस्ती ब्याज दरों की मांग की गई है।

कुल मिलाकर, उद्योग जगत एक ऐसे बजट की उम्मीद कर रहा है जो आर्थिक विकास को गति दे, निवेश के माहौल में सुधार करे और वैश्विक प्रतिस्पर्धात्मकता को बढ़ाए।

इसी क्रम में ट्रेड यूनियनों ने भी बजट 2026-27 से पहले अपने सुझावों में आयकर राहत, सामाजिक सुरक्षा कोष, न्यूनतम पेंशन, स्थिर रोजगार, रिक्तियों की पूर्ति, श्रम संहिताओं में संशोधन तथा कारपोरेट/समृद्ध वर्ग पर अधिक कर-योगदान जैसी मांगें उठाई हैं।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि सामाजिक संगठनों, शिक्षाविदों, नागरिक प्रतिनिधियों, उद्योग जगत और ट्रेड यूनियनों की अपेक्षाएं यह स्पष्ट करती हैं कि केंद्रीय बजट 2026–27 से जनता केवल आंकड़ों का संतुलन नहीं, बल्कि जीवन की वास्तविक चुनौतियों का समाधान चाहती है। नए बजट से लोग यह आशा करते हैं कि इसके प्रावधानों के द्वारा देश में आर्थिक विकास होगा, जिससे सभी लोगों के जीवन स्तर में सुधार रोगा। महंगाई, ग़रीबी, बेरोज़गारी में कमी आएगी। शिक्षा, स्वास्थ्य तथा समाजकल्याण की योजनाओं में निवेश बढ़ेगा, आर्थिक असानता में कमी आएगी। कर-नीति ऐसी बनाई जाएगी, जिससे निम्न तथा मध्यम वर्ग पर करों का भार कम पड़ेगा। ■■

अर्थव्यवस्था में सन्तुलन

इस्लाम ने नैतिक, सामाजिक, पारिवारिक तथा आध्यात्मिक क्षेत्र में सन्तुलन, सामन्जस्य और दयालुता का जो उच्चतम आदर्श प्रस्तुत किया वह आश्चर्य में डाल देता है। परन्तु इससे आगे बढ़कर विशुद्ध सांसारिक और भौतिक समझे जाने वाले आर्थिक और वित्तीय क्षेत्र को जिस प्रकार दयाभाव, इन्सानी हमदर्दी, आपसी सौहार्द से परिपूर्ण कर दिया गया है उसे देखकर अनायास ही मन पुकार उठता है कि यह वास्तव में अल्लाह कृपालु और दयालु द्वारा प्रदत्त शिक्षाएं हैं। इसमें एक ओर असम्पन्न, ग़रीब और मुहताज पर पूर्ण फोकस है तो दूसरी ओर व्यापारी और व्यावसायी के हितों का पूरा ध्यान है। उपभोक्ता को धोखा न दिया जाए, तो व्यापारी का पैसा भी क्रेता न मार बैठे। ज़मीन मालिक का अहित न हो, मगर शोषण मज़दूर का भी न हो। यह सन्तुलन केवल इस्लाम की ही देन है। इस्लाम का एक क्रान्तिकारी क़दम यह है कि उसने आर्थिक क्रिया को सम्पूर्ण मानवीय जीवन का अंग मानकर उसे नैतिकता से सम्बद्ध कर दिया। ज़ुल्म-ज़्यादती, अत्याचार और शोषण समाप्त हो और नैतिक गुणों को बढ़ावा मिले। लोग एक-दूसरे के साथ स्वेच्छा एवं निःस्वार्थ भाव से हमदर्दी और एहसान का व्यवहार करें और उनके बीच प्रेम-भाव बढ़े।

एक अपील, एक ऐलान और तआरुफ़

आपकी ख़ुसूसी तवज्जह का सबसे ज़्यादा मुस्तहिक़

मुस्लिम लड़कियों का यतीमख़ाना गया

39 साल की ख़िदमात



कैफ़ियते-क़ियाम : इदारा का तीन यतीम लड़कियों से 21 दिसम्बर 1986 को एक किराया के खपरैल मकान में क़ियाम अमल में आया था, जो कभी साँप, बिच्छू और चिड़ियों का बसेरा था—बक़ौल अल्लामा इक़बाल (रह.) "इश्क़ ने आबाद कर डाले हैं दश्त-ओ-कोहसार"

हिन्दुस्तान की रियासत बिहार, झारखंड, बंगाल, उड़ीसा (ओडीशा) में अपने तर्ज़ की पहली और वाहिद इक़ामती दीनी व असरी उलूम की मशहूर तालीमगाहें (Residential) जो इस्लामी और असरी उलूम का संगम होने की वजह से मशहूर है। • इदारा बुनियाद के दिन से ही सही इस्लामी ख़ुतूत पर यतीम के साथ-साथ ग़रीब और ग़ैर-यतीम तालिबात की तालीमी व तर्बियती ख़िदमात अंजाम दे रहा है। • यहां की तालिबात को मैट्रिक (Matric) पास करने के बाद कॉलेज के अलावा अरबी यूनिवर्सिटी में पहले और दूसरे साल में बाआसानी दाख़िला मिल जाता है। • शोबा-ए-हिफ़्ज़ की तालिबा को भी हिफ़्ज़ के साथ-साथ मैट्रिक (Matric) तक पढ़ाया जाता है। • पांच ज़ुबानों में क़ुरआन और इस्लामियात और बिहार बोर्ड के निसाबे-तालीम के साथ मेयारी तालीम का नज़्म है। • **तालीमी साल** अप्रैल ता मार्च, • इदारा के अहाता (Campus) में ही पर्दे (Purdah) में रहकर नर्सरी (Nursery) से मैट्रिक (Matric) तक की तालीम, होम साइंस, उमोरे-ख़ानादारी, सिलाई-कटाई, मेहंदी व पेंटिंग और कम्प्यूटर की तालीम वग़ैरा दी जाती है। इसके लिए बच्चियों को कहीं आना-जाना नहीं पड़ता। • **तालीमी मराहिल** • इब्तिदाई • सानवी • आला • फ़ासलाती तालीम • शोबा हिफ़्ज़ व नाज़रा **यतीम तालिबात की तादाद** 75 है। **नोट** यतीम तालिबात का सारा ख़र्च, तआम व क़ियाम व रिहाइश वग़ैरा बिल्कुल मुफ़्त (Free) है किसी तरह का कोई ख़र्च नहीं लिया जाता है। **बैरूनी तालिबात की तादाद** अपने ख़र्च पर दारुल अक़ामा (Boarding) में रहकर तालीम हासिल करने वाली और दूसरे गांव से पढ़कर जाने वाली लगभग 100 हैं। **किफ़ाला स्कीम (Sponsorship)** के तहत एक यतीम बच्ची का सालाना ख़र्च तीस हज़ार रुपये (Rs. 30,000) है। आप भी एक यतीम बच्ची की किफ़ालत की ज़िम्मेदारी लेकर सवाब में शरीक हों। **असातिज़ा, मुअल्लिमात और दीगर मुलाज़िमीन की तादाद** 33 है। एक माह की तनख़्वाह एक लाख अस्सी हज़ार रुपये (Rs. 1,80,000) से ज़्यादा है। **सालाना ख़र्च** तक़रीबन पैतालिस लाख रुपये (Rs. 45,00,000)। **ज़रिया आमदनी** मुस्लिम अवाम के चंदे **अपील** आज के माद्दापरस्ताना (Materialistic) और जदीद दौर में लड़कियों के लिए जदीद और मुकम्मल इस्लामी तर्ज़े-तालीम के साथ रिहाइशी (Residential) इदारों की पहले से कहीं ज़्यादा बढ़कर ज़रूरत है। • आप इस आसमान छूती महंगाई को देखते हुए और माहे रमज़ानुल मुबारक वग़ैरह के मुबारक मौक़ा पर इदारे की नन्ही-मुन्नी मासूम यतीम बच्चियों को ऊंचा उठाने के लिए अपने • ज़कात • अतियात • सदक़ात से भरपूर माली मदद करें ताकि वे तालीम और हुनर के मैदान में आगे बढ़ सकें और किसी से पीछे न रहें। • बाक़ी तामीरी व तालीमी मन्सूबों को पूरा करने के लिए रक़म की फ़ौरी ज़रूरत है। • इदारा आपके फ़राख़दिलाना और मुख़लिसाना भरपूर माली तआवुन का मुंतज़िर है। **याद रखें** यह लड़कियों का इदारा है। यहां चंदा वसूल करने वालों की बहुत कमी है। यहां का कोई भी मुहस्सिल कमीशन (उजरत) पर चंदा वसूल नहीं किया करता है।

नोट : इदारा की मुख़्तसर तारीख़ दस्तावेज़ी फ़िल्म (Documentary Film) नज़रे-इनायत (Nazr-e-Enayeth) यू-ट्यूब (You Tube) पर देखें।

चैक व ड्राफ़्ट और कोर बैंकिंग स्लिप पर सिर्फ़ यह लिखें : THE GAYA MUSLIM GIRLS' ORPHANAGAE

बराए राबिता चैक व ड्राफ़्ट और मनीऑर्डर भेजने का पता

Founder & Hon. G. Secretary, THE GAYA MUSLIM GIRLS' ORPHANAGE,
At. : Kolowna, P.o : Cherki-824237, Distt. : Gaya (Bihar) India

Email : thegayamuslimgirlsorphanage@gmail.com, Mobile : 8969435151, Website : www.gmgo.in

Beneficiary Name
THE GAYA MUSLIM GIRLS' ORPHANAGE
Bank A/C No.: 300402010007752 (ज़कात/Zakath)
Bank A/C No.: 300402010009846 (डोनेशन/Donation)
Bank IFSC Code No: UBIN0530042
Bank: UNION BANK OF INDIA
(MAIN BRANCH GAYA)

Scan & Pay

याद रखें : बैंक में रक़म ट्रांसफ़र की तफ़्सील बराए-मेहरबानी स्कैन एंड पै (Scan & Pay) या किसी ज़रिये से रक़म ट्रांसफ़र के बाद स्क्रीन शॉट (Screen Shot) नाम व पता सहित व्हाट्स एप कर दें ताकि रसीद भेजी जा सके।

व्हाट्स एप नम्बर 7367909126 बानी व इजाज़ी जनरल सेक्रेट्री इक़बाल अहमद ख़ां—9934480190

पटना ब्रांच ऑफ़िस : पटना शहर के हमदर्द अपना चैक व ड्राफ़्ट और रक़म देने के लिए इनसे राबिता करें।

जनाब ग़ुलाम मुहम्मद ख़ां (सदर) समनपूरा, पटना, मोबाइल : 9934943229

जनाब इंजीनियर मुहम्मद हसनैन ख़ां, समनपूरा, पटना, मोबाइल : 9631867066

जानकारी

बजट क्या है?



❖मुहम्मद शकील शम्सी

आम बोलचाल में जिसे हम बजट कहते हैं, उसका औपचारिक नाम वार्षिक वित्तीय विवरण (Annual Financial Statement) होता है। यह दरअस्ल, एक निश्चित अवधि, आमतौर पर एक वर्ष के लिए देश की संभावित आय और प्रस्तावित ख़र्च का वार्षिक ख़ाका होता है। इसमें यह बताया जाता है कि सरकार को किन-किन स्रोतों से कितनी आय होने की उम्मीद है और तय प्राथमिकताओं के अनुसार किन मदों में कितना ख़र्च किया जाएगा। ये प्राथमिकताएं देश की आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखकर तय की जाती हैं। बजट ख़र्च के लिए एक आधार और कार्य-योजना उपलब्ध कराता है, ताकि उपलब्ध संसाधनों का प्राथमिकताओं के अनुसार बेहतर, प्रभावी और उचित उपयोग किया जा सके।

बजट एक निश्चित अवधि, आमतौर पर एक वर्ष के लिए देश की संभावित आय और प्रस्तावित ख़र्च का वार्षिक ख़ाका होता है।

बजट का मूल उद्देश्य वित्तीय अनुशासन, जवाबदेही और संसाधनों के सर्वोत्तम उपयोग को सुनिश्चित करना होता है। पूर्व नियोजन के माध्यम से बजट अनावश्यक ख़र्चों से बचाता है, आर्थिक अनिश्चितताओं को कम करता है और दीर्घकालिक लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक सिद्ध होता है। सरकार के संदर्भ में बजट की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। सरकार के लिए बजट एक नीतिगत दस्तावेज़ होता है, जिसके माध्यम से वह विकास परियोजनाओं और प्रोत्साहनों के ज़रिये आर्थिक वृद्धि को गति देती है। स्वास्थ्य, शिक्षा और सामाजिक सुरक्षा के लिए धन उपलब्ध कराकर सामाजिक कल्याण को बढ़ावा देती है, सार्वजनिक ऋण और राष्ट्रीय बचत का प्रबंधन करती है तथा कम आय वर्गों की सहायता कर असमानता को कम करने का प्रयास करती है।

जनहित पर आधारित बजट आर्थिक विकास और सामाजिक दायित्व के बीच संतुलन स्थापित करता है। यह ग़रीब और कमज़ोर वर्गों के लिए सब्सिडी, निर्धन छात्रों के लिए छात्रवृत्ति और शैक्षिक सहायता, महिलाओं और बच्चों की कल्याणकारी योजनाएं तथा वरिष्ठ नागरिकों के लिए आर्थिक और सामाजिक सहयोग जैसी पहलों को प्राथमिकता देता है। ऐसा बजट

लोकतंत्र को मज़बूत करता है और राष्ट्रीय विकास को आगे बढ़ाता है। इसके विपरीत, यदि बजट व्यक्तिगत या किसी विशेष वर्ग के हितों को ध्यान में रखकर बनाया जाए, तो वह देश के संतुलित विकास में बाधा बनता है और अर्थव्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव डालता है।

हमारी रोज़मर्रा की ज़िंदगी पर भी बजट का गहरा असर पड़ता है। यह घरेलू ख़र्च और व्यक्तिगत बचत को प्रभावित करता है। करों में वृद्धि से महंगाई बढ़ने की आशंका भी रहती है। इसलिए आम आदमी के लिए यह ज़रूरी है कि वह बजट की कम-से-कम उन बातों को समझे, जिनका सीधा असर हमारे दैनिक ख़र्चों पर पड़ता है। बजट को समझने के लिए उससे जुड़ी पारिभाषिक शब्दावली (Terminologies) को जानना आवश्यक है। इन शब्दों को समझे बिना बजट को समझना न केवल कठिन, बल्कि लगभग असंभव हो जाता है। चूंकि हमारे देश का बजट शीघ्र ही प्रस्तुत होने वाला है, इसलिए इसी आवश्यकता के तहत नीचे कुछ ज़रूरी शब्दों की सरल, आम भाषा में व्याख्या दी जा रही है, ताकि पाठकों को बजट समझने में आसानी हो :

बजट का मूल उद्देश्य वित्तीय अनुशासन, जवाबदेही और संसाधनों के सर्वोत्तम उपयोग को सुनिश्चित करना होता है। पूर्व नियोजन के माध्यम से बजट अनावश्यक ख़र्चों से बचाता है, आर्थिक अनिश्चितताओं को कम करता है और दीर्घकालिक लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक सिद्ध होता है।

1. बजट (Budget / Annual Financial Statement) : एक निश्चित अवधि, आमतौर पर एक वर्ष, के लिए देश की संभावित आय और प्रस्तावित ख़र्च का वार्षिक विवरण।

2. अधिशेष बजट (Surplus Budget) : ऐसा बजट जिसमें आय, ख़र्च से अधिक हो।

3. घाटे का बजट (Deficit Budget) : ऐसा बजट जिसमें ख़र्च, आय से अधिक हो। भारत सहित अधिकांश विकासशील और अविकसित देशों में प्रायः घाटे का बजट ही होता है।

4. वित्तीय घाटा (Fiscal Deficit) : जब कुल ख़र्च, कुल प्राप्तियों (ऋण को छोड़कर) से अधिक हो, तो उस अंतर को वित्तीय घाटा कहते हैं।

5. राजस्व प्राप्तियां (Revenue Receipts) : सरकार की वे आय, जिनसे न तो कोई नई देनदारी उत्पन्न होती है और न ही परिसंपत्तियों में कमी आती है, जैसे करों से प्राप्त आय।

6. पूंजीगत प्राप्तियां (Capital Receipts) : वे प्राप्तियां जो सरकार पर देनदारी डालती हैं या परिसंपत्तियों में कमी लाती हैं।

7. राजस्व व्यय (Revenue Expenditure) : वे ख़र्च जिनसे किसी नई परिसंपत्ति का निर्माण नहीं होता, जैसे वेतन या पेंशन पर होने वाला ख़र्च।

8. पूंजीगत व्यय (Capital Expenditure) : वे ख़र्च जो देनदारियों में कमी लाते हैं या परिसंपत्तियों में वृद्धि करते हैं।

9. राजस्व घाटा (Revenue Deficit) : जब राजस्व व्यय, राजस्व प्राप्तियों से अधिक हो।

10. प्राथमिक घाटा (Primary Deficit) : वित्तीय घाटा, जिसमें से ब्याज भुगतान घटा दिया गया हो।

11. कर राजस्व (Tax Revenue) : करों के माध्यम से प्राप्त आय, जैसे आयकर, जीएसटी, सीमा शुल्क आदि।

12. ग़ैर-कर राजस्व (Non-Tax Revenue) : करों के अलावा अन्य स्रोतों से प्राप्त आय, जैसे लाभ, ब्याज, जुर्माना आदि।

13. सार्वजनिक ऋण (Public Debt) : सरकार द्वारा लिया गया कुल ऋण।

14. सब्सिडी (Subsidy) : वस्तुओं और सेवाओं की क़ीमतें कम रखने के लिए सरकार द्वारा दी जाने वाली वित्तीय सहायता।

15. निजीकरण / विनिवेश (Disinvestment) : सरकारी उपक्रमों में सरकार की हिस्सेदारी की बिक्री।

16. आकस्मिक निधि (Contingency Fund): अचानक और अप्रत्याशित ख़र्चों को पूरा करने के लिए बनाया गया विशेष कोष।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि बजट एक अत्यंत महत्वपूर्ण वित्तीय दस्तावेज़ है, जो किसी देश के भविष्य की योजना बनाने, संसाधनों का समझदारी से उपयोग करने और राष्ट्रीय हित में निर्धारित लक्ष्यों को हासिल करने में सहायता करता है। यह देश की प्राथमिकताओं, उद्देश्यों और बेहतर आर्थिक भविष्य के लिए एक प्रभावी साधन है। ■■

उपभोक्तावाद बनाम संतुलित जीवन

❖मुहम्मद सिकन्दर

सामान्य अर्थों में उपभोग का आशय उन वस्तुओं और सेवाओं के उपयोग से है, जिनके माध्यम से व्यक्ति अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। जो व्यक्ति इन वस्तुओं का उपयोग करता है, उसे उपभोक्ता कहा जाता है। समाज की संस्कृति, मूल्य और जीवन-शैली में जैसे-जैसे परिवर्तन होता गया, वैसे-वैसे उपभोग की प्रकृति भी बदलती चली गई। प्रारंभ में उपभोग केवत जीवन की मूल आवश्यकताओं तक सीमित था, किंतु आधुनिक समय में यह आराम, सुविधा, प्रतिष्ठा और दिखावे से जुड़ गया है। आज उपभोग केवल आवश्यकता नहीं, बल्कि सामाजिक पहचान और प्रतिस्पर्धा का साधन बनता जा रहा है, और यही प्रवृत्ति आगे चलकर उपभोक्ता का रूप ले लेती है।

सभ्यता के प्रारंभिक दौर में मनुष्य प्रकृति पर निर्भर था और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति जानवरों के शिकार, फल-फूल और कंद-मूल से करता था। उस समय न धन की प्रधानता थी और न किसी संगठित बाज़ार की आवश्यकता। कृषि युग के आरंभ में भी लोग अपने गांव या समुदाय के भीतर वस्तुओं की अदला-बदली करके जीवन-यापन करते थे। उपभोग सीमित था और संसाधनों का उपयोग सोच-समझकर किया जाता था। किंतु औद्योगिक क्रांति के साथ बड़े पैमाने पर उत्पादन शुरू हुआ, बाज़ार विकसित हुए और प्रतिस्पर्धा बढ़ी। उत्पादकों ने ऐसी वस्तुएं बनानी शुरू कीं जो न केवल ज़रूरतें पूरी करती थीं, बल्कि लोगों की इच्छाओं को भी लगातार बढ़ाने लगीं। यहीं से उपभोग धीरे-धीरे आवश्यकता से आगे बढ़कर आदत और फिर प्रवृत्ति बन गया।

आर्थिक विकास के साथ समाज में एक नया असंतुलन पैदा हुआ। व्यक्ति उन वस्तुओं को पाने की चाह रखने लगा जिनके बिना भी जीवन संभव था। इच्छाएं तेज़ी से बढ़ीं, जबकि साधन सीमित रहे। परिणामस्वरूप व्यक्ति अधिक कमाने, अधिक ख़र्च करने और अधिक उपभोग करने की दौड़ में शामिल हो गया। इसी स्थिति को उपभोक्तावाद कहा जाता है, जहां उपभोग जीवन का साधन न रहकर जीवन का लक्ष्य बन जाता है। इस संदर्भ में क़ुरआन मनुष्य को स्पष्ट चेतावनी देता है–

"खाओ और पियो, लेकिन फ़िज़ूलख़र्ची मत करो, निश्चय ही अल्लाह फ़िज़ूलख़र्ची करने वालों को पसंद नहीं करता।" (क़ुरआन, 7:31)

यह आयत बताती है कि उपभोग की अनुमति है, परंतु अति और अपव्यय स्वीकार्य नहीं हैं।

परंपरागत समाज की संरचना उपभोक्तावादी सोच से भिन्न थी। संयुक्त परिवारों में जीवन सादा था, आवश्यकताएं सीमित थीं और ख़र्च पर नियंत्रण रहता था। परिवार का मुखिया या कर्ता यह सुनिश्चित करता था कि संसाधनों का दुरुपयोग न हो। बाज़ार भी छोटे थे और केवल आवश्यक वस्तुएं ही उपलब्ध होती थीं। इसके विपरीत आधुनिक समाज व्यक्तिवाद, भौतिक सुख और दिखावे को अधिक महत्व देता है। संयुक्त परिवारों की जगह छोटे परिवारों का चलन बढ़ा, जिससे ख़र्च और उपभोग दोनों में वृद्धि हुई। लोग अधिक धन कमाने लगे ताकि वे अधिक सुविधाएं और आराम की वस्तुएं प्राप्त कर सकें। इस प्रकार सामान्य उपभोग धीरे-धीरे उपभोक्तावाद में बदल गया।

उपभोक्तावादी संस्कृति का विकास सबसे पहले औद्योगिक रूप से विकसित देशों में हुआ और बाद में यह भारत जैसे विकासशील देशों में भी फैल गई। भारत में स्वतंत्रता के बाद औद्योगीकरण, शहरीकरण और परिवहन व संचार साधनों के विकास से जीवन-शैली में तीव्र परिवर्तन आया। ग्रामीण क्षेत्रों में विकास योजनाओं से आय के साधन बढ़े, पर साथ ही लोगों की सोच और उपभोग की आदतें भी बदलने लगीं। शहरों की ओर पलायन बढ़ा और जीवन की गति तेज़ हो गई। इन सभी परिवर्तनों ने मिलकर एक ऐसी संस्कृति को जन्म दिया, जिसमें अधिक उपभोग को सफलता और प्रगति का प्रतीक माना जाने लगा।

आज उत्पादक और कंपनियां लोगों की मानसिकता को समझकर नई-नई वस्तुएं बनाती हैं और विज्ञापनों के माध्यम से उन्हें ज़रूरी साबित करती हैं। उदाहरण के लिए टॉयलेट पेपर, टूथ पेस्ट, नैपकिन पेपर, पिज्जा, बर्गर, तरह-तरह के सौंदर्य प्रसाधन, पेप्सी और कोला जैसे कोल्ड ड्रिंक्स,

डिब्बाबन्द मुरब्बे और अचार आदि इसी तरह की वस्तुएं हैं। इनके बिना भी व्यक्ति इन सुविधाओं को दूसरे रूप में प्राप्त कर सकता है, लेकिन आज बहुत सामान्य आय वाले परिवारों में भी इन वस्तुओं का उपभोग तेज़ी से बढ़ता जा रहा है। सामान्य उपभोग की वस्तुओं, जैसे–आटा, चावल, दालों और मसालों को भी ट्रेडमार्क युक्त पैकेटों में महंगे दामों पर बेचा जा रहा है। लोग अधिक क़ीमत देने के बाद भी इनका उपभोग इसलिए करते हैं, जिससे वे अपने-आपको अधिक प्रतिष्ठित सिद्ध कर सकें।

एक सामान्य परिवार में आज बच्चों के खिलौनों, कॉपियों और तरह-तरह के बॉलपेनों, ड्राइंग की किताबों और रंगों, बेबी सोप और क्रिम पाउडर तथा बाज़ार में सिले ग़ैर-ज़रूरी वस्त्रों पर धन व्यय कर दिया जाता है। लोग अधिक क़ीमत इसलिए चुकाते हैं ताकि वे स्वयं को आधुनिक और प्रतिष्ठित महसूस कर सकें। पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने इस प्रवृत्ति से सावधान करते हुए सादगी को महत्व दिया और फ़रमाया—"सादगी ईमान का हिस्सा है।" (अबू-दाऊद)

उपभोक्तावाद का प्रभाव हमारे त्योहारों और सामाजिक परंपराओं पर भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। पहले त्योहार मिल-जुलकर सादगी से मनाए जाते थे, जहां भावनाओं और आपसी रिश्तों का महत्व होता था। आज त्योहार दिखावे, ख़र्च और बाज़ार से जुड़ गए हैं। मोबाइल संदेश, सोशल मीडिया पोस्ट और ऑनलाइन ग्रीटिंग्स ने व्यक्तिगत मेल-मुलाक़ात की जगह ले ली है। कंपनियां नए-नए अवसर और छूट योजनाएं बनाकर लोगों को अधिक ख़र्च करने के लिए प्रेरित करती हैं, जिससे उपभोक्ता विवेकहीन उपभोग की ओर बढ़ता चला जाता है।

उपभोक्ताओं पर बाज़ार इस तरह हावी होता जा रहा है कि कुछ समय पहले तक जिस तरह परिवार में त्यौहार को मनाने की तैयार की जाती थी, वे तैयारियां अब व्यापारियों द्वारा अपनी दुकानों को सजाकर की जाने लगी हैं। गर्मियों में समर सरप्राइज, ठंड के मौसम में बिंटर बोनान्जा और बरसात में मानसून गिफ़्ट तैयार करके सामान्य उपभोक्ताओं की आय का बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा बुरी तरह दोहन किया जाने लगा है। विभिन्न अवसरों और विभिन्न मौसमों सेल-डिस्काउंट, एक के साथ एक मुफ़्त, 80 प्रतिशत की आदि छूट विशेष ख़रीद पर अतिरिक्त उपहार जैसी आकर्षक योजनाओं के कारण उपभोक्ता सही और ग़लत के अन्तर को समझने में असहाय होता जा रहा है।

आधुनिक समय में ऑनलाइन शॉपिंग और होम डिलीवरी ने उपभोग को और भी आसान बना दिया है। लोग घर बैठे महंगी वस्तुएं मंगवाकर स्वयं को आधुनिक समझते हैं। जो भोजन घर पर कम ख़र्च में बन सकता है, उसके लिए बाहर से कई गुना महंगा खाना मंगवाया जाता है। व्यापारी वर्ग उपभोक्ताओं की मानसिकता को भली-भांति समझकर ऐसे तरीक़े अपनाता है जिससे उपभोक्ता अधिक क़ीमत देने के बाद भी संतुष्टि महसूस करे। इस स्थिति में उपभोक्ता, जो कभी "बाज़ार का राजा" कहा जाता था, आज स्वयं बाज़ार व्यवस्था के नियंत्रण में आ गया है।

इसके विपरीत संतुलित जीवन की अवधारणा उपभोग और संयम के बीच सामंजस्य स्थापित करने पर बल देती है। संतुलित जीवन का अर्थ है आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए इच्छाओं पर नियंत्रण रखना, संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करना और जीवन के भौतिक तथा मानसिक-आध्यात्मिक पक्षों के बीच संतुलन बनाए रखना। क़ुरआन इसी संतुलन की ओर मार्गदर्शन करता है—"और इसी प्रकार हमने तुम्हें एक मध्यम मार्ग वाली उम्मत बनाया है।" (क़ुरआन, 2:143)

यह आयत बताती है कि मध्यम मार्ग ही आदर्श जीवन-पद्धति है। इस्लामी दृष्टिकोण संतुलित जीवन का स्पष्ट समर्थन करता है। इस्लाम में उपभोग की अनुमति है, लेकिन अपव्यय, दिखावे और अति की मनाही है। धन और संसाधनों को अल्लाह की अमानत माना गया है, जिनके बारे में मनुष्य से प्रश्न किया जाएगा—"फिर उस दिन तुमसे नेमतों के बारे में अवश्य पूछा जाएगा।" (क़ुरआन, 102:8)

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने संतोष के महत्व को स्पष्ट करते हुए फ़रमाया–

"अमीर वह नहीं जिसके पास बहुत माल हो, बल्कि अमीर वह है जिसका दिल संतुष्ट हो।"

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

अंततः कहा जा सकता है कि उपभोक्तावाद और संतुलित जीवन के बीच संघर्ष आधुनिक समाज की सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है। उपभोक्तावाद जहां सुविधा और आर्थिक गति प्रदान करता है, वहीं संतुलित जीवन उसे नैतिक दिशा और सीमा देता है। यदि उपभोग को विवेक, संयम और सामाजिक उत्तरदायित्व के साथ जोड़ा जाए, तो विकास और मानव-कल्याण एक साथ संभव हो सकते हैं। ऐसा समाज, जो उपभोक्तावाद के लाभों को स्वीकार करे लेकिन संतुलित जीवन के मूल्यों को न छोड़े, वही वास्तव में टिकाऊ, न्यायपूर्ण और सुखी समाज की ओर अग्रसर हो सकता है। ■■



बढ़ती जीडीपी, गिरता रुपया

❖डॉ. प्रदीप कुमार

दुनिया की सबसे तेज़ी से बढ़ती बड़ी अर्थव्यवस्था, चौथे स्थान पर पहुंचती जीडीपी, रिकॉर्ड ऊंचाई छूते शेयर सूचकांक। हाल के वर्षों में भारत की अर्थव्यवस्था को मिले ये तमग़े नीति-निर्माताओं और सत्तातंत्र के लिए आत्म-संतोष के कारण भले ही रहे हैं, लेकिन इसी चमकदार परदे के पीछे एक कड़वा सच भी लगातार गहराता गया है, रुपये का कमज़ोर होना। सवाल यह नहीं है कि रुपया गिरा क्यों, बल्कि यह है कि बढ़ती जीडीपी के बावजूद रुपया लगातार गिर क्यों रहा है और क्यों यह गिरावट अब संरचनात्मक संकट का संकेत देती है।

वर्ष की शुरुआत में डॉलर के मुक़ाबले लगभग 85.80 पर खड़ा रुपया दिसंबर आते-आते 90 के पार पहुंच गया। यह गिरावट किसी एक झटके या असाधारण वैश्विक घटना का परिणाम नहीं है। डॉलर इस दौरान ऊपर-नीचे होता रहा, लेकिन रुपया हर हाल में कमज़ोर ही पड़ता गया। यही वजह है कि एशियाई मुद्राओं के बीच रुपया सबसे ख़राब प्रदर्शन करने वाली मुद्रा बन गया। इसे केवल वैश्विक अस्थिरता, युद्ध या अमेरिकी नीतियों के खाते में डाल देना आसान है, लेकिन यह आधा सच है।

सरकार और नीति-निर्माता अक्सर रुपये की कमज़ोरी को बाहरी कारणों से जोड़ते हैं—टैरिफ़ युद्ध, रुकी हुई व्यापार वार्ताएं, भू-राजनीतिक तनाव। जानकारों का कहना है कि यह तर्क पूरी तरह निराधार नहीं है। ऊंचे टैरिफ़ और अनिश्चित वैश्विक व्यापार वातावरण का असर हर उभरती अर्थव्यवस्था पर पड़ता है, लेकिन जब वही परिस्थितियां अन्य एशियाई देशों की मुद्राओं को उतना नहीं गिरातीं, तब भारत के मामले में यह सफ़ाई खोखली लगने लगती है। कमज़ोर रुपया केवल बाहरी दबावों का परिणाम नहीं, बल्कि आंतरिक आर्थिक संरचना की कमज़ोरी का प्रतिबिंब है।

मुद्रा का मूल्य अंततः आपूर्ति और मांग से तय होता है। भारत को डॉलर की ज़रूरत आयात, क़र्ज़ चुकाने और वैश्विक लेन-देन के लिए होती है। यह ज़रूरत विदेशी निवेश, निर्यात और सेवा क्षेत्र से आने वाली आय से पूरी होनी चाहिए। विडंबना यह है कि तेज़ी से बढ़ती अर्थव्यवस्था होने के बावजूद भारत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश आकर्षित करने में अपेक्षित सफलता हासिल नहीं कर सका है। संयुक्त राष्ट्र के निवेश सूचकांक में भारत 15वें स्थान पर है और अब तक

100 अरब डॉलर का आंकड़ा पार नहीं कर पाया है। यह स्थिति उस दावे से मेल नहीं खाती कि भारत निवेशकों के लिए सबसे पसंदीदा गंतव्य बन चुका है।

यहां एक और चिंताजनक पहलू उभरता है—नीति-निर्माताओं और कुछ अर्थशास्त्रियों का वह वर्ग, जो रुपये की गिरावट को सकारात्मक बताने लगता है। तर्क दिया जाता है कि कमज़ोर रुपया निर्यात को बढ़ावा देता है। यह सिद्धांत पुस्तकों में आकर्षक लग सकता है, लेकिन भारत जैसी अर्थव्यवस्था में यह अधूरा और भ्रामक है।

भारत जितना निर्यात करता है, उससे कहीं अधिक आयात करता है। उर्वरक, पेट्रोलियम, सोना, इलेक्ट्रॉनिक पुर्ज़े, दवा निर्माण की सामग्री—ये सब आयात पर निर्भर हैं। जब रुपया कमज़ोर होता है, तो इनकी लागत बढ़ती है और उसका सीधा बोझ किसानों, उपभोक्ताओं और सरकार पर पड़ता है।

यह मान लेना भी एक भ्रम है कि सस्ता रुपया अपने आप निर्यात बढ़ा देगा। भारतीय निर्यात बड़े पैमाने पर आयातित सहायक सामग्रियों पर निर्भर है। यदि डॉलर महंगा होता है और कच्चे माल की क़ीमत बढ़ती है, तो भारतीय उत्पाद वैश्विक बाज़ार में मूल्य प्रतिस्पर्धा खो सकते हैं। ऐसे में कमज़ोर मुद्रा लाभ नहीं, बल्कि बाधा बन जाती है।

रुपये की मज़बूती का सीधा संबंध आर्थिक विकास की गुणवत्ता से है, न कि केवल उसकी दर से। विकास तब टिकाऊ होता है, जब उसमें सार्वजनिक निवेश और निजी ख़पत दोनों का संतुलन हो।

आदर्श स्थिति में आर्थिक विकास एक सकारात्मक चक्र से चलता है—निवेश से रोज़गार, रोज़गार से आय, आय से ख़पत, ख़पत से मांग और मांग से फिर निवेश, लेकिन भारत में यह चक्र अधूरा है। निजी क्षेत्र बड़े निवेश से हिचक रहा है। इसके पीछे नीति-अनिश्चितता, नियामक दबाव और मांग की वास्तविक कमज़ोरी जैसे दृश्य और अदृश्य कारण हैं।

एक ऐसी अर्थव्यवस्था जो सौ खरब डॉलर की जीडीपी का सपना देख रही है, उसे अपने आंतरिक विरोधाभासों से आंखें नहीं मूंदनी चाहिए। तीन दशक के उदारीकरण के बाद भी लगभग आधा कार्यबल कृषि में फंसा है और विनिर्माण क्षेत्र जीडीपी के 20 फ़ीसदी का आंकड़ा नहीं छू पाया है। निर्यात में मामूली वृद्धि हुई है, लेकिन वह भी अपेक्षाओं से बहुत कम है। छोटे और मझोले उद्यम, जो निर्यात वृद्धि की रीढ़ होते हैं, वे नियामक जटिलताओं और सस्ते ऋण की कमी से जूझ रहे हैं।

रुपये का लगातार कमज़ोर होना केवल मुद्रा बाज़ार की घटना नहीं है। यह राजनीतिक अर्थशास्त्र की उन ख़ामियों की ओर इशारा करता है, जिन्हें लंबे समय से नज़रअंदाज़ किया गया है। जब विकास का ढांचा असंतुलित होता है, निवेश का भरोसा कमज़ोर पड़ता है और आयात पर निर्भरता बढ़ती है, तो मुद्रा का गिरना तय है—चाहे जीडीपी के आंकड़े कितने ही चमकदार क्यों न हों।

रुपये की लगातार गिरावट दरअस्ल, राजनीतिक अर्थशास्त्र के उन विरोधाभासों को सामने लाती है, जिन्हें अक्सर चमकदार आंकड़ों के नीचे दबा दिया जाता है। विकास यदि केवल प्रतिशत में मापा जाए और उसकी गुणवत्ता पर सवाल न उठाया जाए, तो मुद्रा जैसे संवेदनशील संकेतक समय-समय पर चेतावनी देते रहेंगे।

डॉलर के मुक़ाबले रुपया 90 के पार पहुंचना कोई आकस्मिक घटना नहीं है। यह गिरावट अचानक नहीं, बल्कि धीरे-धीरे बनी उस प्रवृत्ति का परिणाम है, जिसमें विकास के आंकड़े मज़बूत दिखते हैं, पर उसकी बुनियादें असंतुलित हैं। अंततः सवाल यह है कि क्या हम केवल बढ़ती जीडीपी से संतुष्ट रहना चाहते हैं, या ऐसी अर्थव्यवस्था चाहते हैं जो आत्म-निर्भर, संतुलित और स्थिर हो?

रुपये की लगातार गिरावट दरअस्ल, राजनीतिक अर्थशास्त्र के उन विरोधाभासों को सामने लाती है, जिन्हें अक्सर चमकदार आंकड़ों के नीचे दबा दिया जाता है। विकास यदि केवल प्रतिशत में मापा जाए और उसकी गुणवत्ता पर सवाल न उठाया जाए, तो मुद्रा जैसे संवेदनशील संकेतक समय-समय पर चेतावनी देते रहेंगे। ■■



❖एच. अब्दुर्रक़ीब

"ज़कात के रूप में एकत्रित धन का बड़ा हिस्सा ग़रीबों तक पहुंचता है — (गार्डियन)"

प्रत्येक मुसलमान के लिए ज़कात के रूप में अपनी संपत्ति (बचत, गहने, निवेश आदि) का 2.5 प्रतिशत देना अनिवार्य है। ज़कात इस्लाम के बुनियादी स्तंभों में से एक है। लेकिन बड़ी संख्या में लोग इसके विस्तृत नियमों और व्यावहारिक पहलुओं से अनभिज्ञ हैं। इस्लाम के अन्य कर्तव्यों, जैसे नमाज़ और हज से जुड़े नियमों की बारीकियों से लोग परिचित हैं, लेकिन ज़कात को ठीक से न समझ पाने के कारण या तो लोग इसे सही ढंग से अदा नहीं करते या फिर बिल्कुल नहीं देते। ज़कात को प्रायः एक मामूली दान समझ लिया जाता है, जबकि वास्तव में यह एक अनुशासित व्यवस्था है, जो व्यक्ति के जीवन में भी क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकती है।

क़ुरआन में स्पष्ट रूप से ज़कात पाने वालों को आठ (8) श्रेणियों में विभाजित किया गया है। बहुत-से लोग यह समझते हैं कि कुछ किलो अनाज, कुछ कपड़े या थोड़ी-सी राशि देकर उन्होंने इस कर्तव्य का निर्वाह कर लिया, जबकि इससे ग़रीबों की वास्तविक स्थिति में कोई ठोस परिवर्तन नहीं आता। भारतीय मुसलमानों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति पर सच्चर समिति की रिपोर्ट, नोबेल पुरस्कार विजेता अमर्त्य सेन की SNAP रिपोर्ट तथा हाल के वर्षों में डॉ. क्रिस्टोफ़र जाफ़रलॉट द्वारा प्रस्तुत अध्ययनों में उनकी दुर्दशा और आर्थिक पिछड़ेपन की स्पष्ट तस्वीर सामने आती है।

ग़रीबी के दो प्रमुख पहलू हैं—(1) आर्थिक और (2) सामाजिक। भोजन, वस्त्र, आवास और स्वच्छ पानी जैसी बुनियादी दैनिक आवश्यकताएं आर्थिक पहलू के अंतर्गत आती हैं, जबकि सामाजिक पहलू में सूचना, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसे तत्व शामिल हैं। भारत में ज़कात की अवधारणा और उसके व्यावहारिक कार्यान्वयन को स्पष्ट करने के उद्देश्य से इस लेख में कुछ बिंदु प्रस्तुत किए जा रहे हैं, जिन पर गंभीरता से विचार किया जाना चाहिए और जिनका संदेश व्यापक स्तर तक पहुंचाया जाना आवश्यक है।

लोगों में जागरूकता

ज़कात के महत्व के बारे में लोगों में जागरूकता पैदा करना पहला और सबसे आवश्यक क़दम है। यह स्पष्ट किया जाना चाहिए कि पैग़म्बर और ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन के दौर में ज़कात की सशक्त व्यवस्था स्थापित थी। यह व्यवस्था इतनी प्रभावी थी कि दूसरे ख़लाफ़ा हज़रत उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि.) और हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ के शासनकाल में ज़कात लेने वालों से अधिक संख्या ज़कात देने वालों की हो गई थी।

इस अभियान में ईमानदार और पेशेवर लोगों को जोड़ना

जागरूकता के साथ-साथ सक्षम पुरुषों और महिलाओं को इस व्यवस्था का हिस्सा बनाया जाना चाहिए। खातों, लेखा-परीक्षा और वित्तीय प्रबंधन की जानकारी रखने वाले पेशेवरों, जैसे चार्टर्ड अकाउंटेंट्स, को भी जोड़ा जाना चाहिए, ताकि एक ईमानदार और प्रभावी प्रणाली विकसित की जा सके। इस व्यवस्था को मोहल्ला स्तर से शुरू कर क्षेत्रीय स्तर तक विस्तारित किया जा सकता है और मस्जिदों को इसका केंद्र बनाया जा सकता है।

आर्थिक शिक्षा और धन-सृजन

हमारे समाज में आर्थिक शिक्षा का गंभीर अभाव है। संपत्ति सृजन के साधनों—जैसे व्यापार, स्वरोज़गार और बेहतर नौकरियों के लिए लोगों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। बचत, निवेश और वित्तीय योजना पर व्यवस्थित प्रशिक्षण की आवश्यकता है। इससे समाज में परोपकार की भावना मज़बूत होगी और वास्तविक अर्थव्यवस्था को बल मिलेगा और रोज़गार के अवसर पैदा होंगे। पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के दौर में मदीना के बाज़ार, हज़रत ख़दीजा के व्यापार, ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन तथा अन्य सहाबा इसके सशक्त उदाहरण हैं।

प्रत्येक मुसलमान के लिए ज़कात के रूप में अपनी संपत्ति (बचत, गहने, निवेश आदि) का 2.5 प्रतिशत देना अनिवार्य है। ज़कात इस्लाम के बुनियादी स्तंभों में से एक है। लेकिन बड़ी संख्या में लोग इसके विस्तृत नियमों और व्यावहारिक पहलुओं से अनभिज्ञ हैं।

ज़कात की आधुनिक व्यवस्था को मदरसा पाठ्यक्रम में शामिल करना और मस्जिदों को केंद्र बनाना

ज़कात के विषय में उलमा को पहल करनी चाहिए। मदरसों के पाठ्यक्रम में इस विषय को शामिल करने के साथ-साथ सम्मेलनों और सभाओं में इस पर गंभीर चर्चा होनी चाहिए। वास्तविक जीवन की परिस्थितियों को समझते हुए सामाजिक-आर्थिक सर्वेक्षण किए जाने चाहिए। प्रारंभिक चरण में मोहल्ले की मस्जिद में एक समिति गठित की जाए, जिसमें धार्मिक विद्वान, चार्टर्ड अकाउंटेंट और सामाजिक कार्यकर्ता शामिल हों। इस प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी भी सुनिश्चित की जानी चाहिए, क्योंकि वे परिवारों और सामाजिक परिस्थितियों को बेहतर ढंग से समझती हैं।

आर्थिक प्रौद्योगिकी (फिन-टेक) का उपयोग

ज़कात के संग्रह और वितरण में फिन-टेक एक अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। डिजिटल प्रणाली अपनाने से पूरी प्रक्रिया अधिक पारदर्शी, कुशल और भरोसेमंद बनती है। क्राउड-फंडिंग, ब्लॉकचेन, अकाउंटिंग और ऑडिटिंग जैसे आधुनिक उपकरणों का उपयोग किया जा सकता है।

ज़कात और माइक्रो-फ़ाइनांस

ज़कात की राशि का उपयोग केवल ख़र्च करने के बजाय निवेश के रूप में किया जाना चाहिए। यदि इससे छोटे व्यवसाय शुरू कराए जाएं तो ग़रीब व्यक्ति आत्म-निर्भर बन सकता है और आगे चलकर रोज़गार भी प्रदान कर सकता है। इस प्रकार ज़कात लेने वाला ज़कात देने वाला बन सकता है। जानकारों के अनुसार, हज़रत उमर बिन ख़त्ताब ज़कात की राशि से ज़रूरतमंदों को ऋण देते थे, जिससे वे सशक्त बनते थे।

ज़कात के माध्यम से कौशल-विकास

ऐसे ग़रीब लोग जो प्रतिभाशाली हैं, लेकिन संसाधनों के अभाव में आगे नहीं बढ़ पा रहे, उन्हें विशेष सहायता दी जानी चाहिए। प्रशिक्षण, उपकरण और पूंजी उपलब्ध कराकर उन्हें आत्म-निर्भर बनाया जा सकता है।

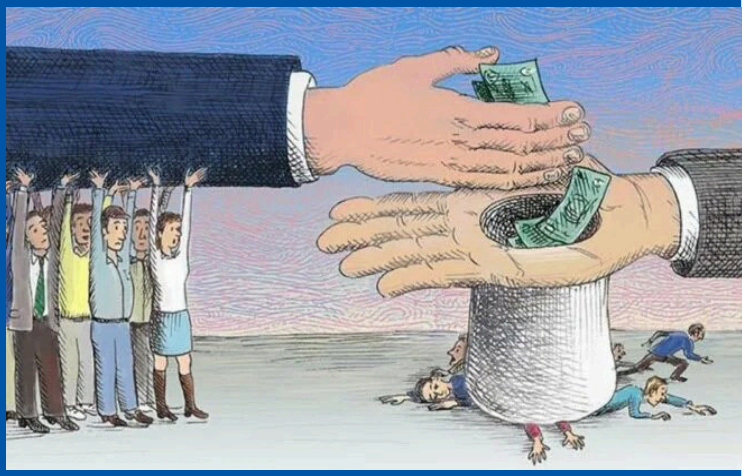
ज़कात और ग़ैर-मुस्लिम

हज़रत उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि.) के अनुसार, ज़कात की आठ श्रेणियों में ग़रीब से आशय मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम—दोनों से है। यदि ज़कात का एक छोटा हिस्सा भी ज़रूरतमंद ग़ैर-मुस्लिमों तक पहुंचे, तो इससे सामाजिक सौहार्द बढ़ेगा और मुसलमानों की सकारात्मक छवि बनेगी।

ज़कात और सतत विकास लक्ष्य (Sustainable Development Goals- SDGs)

संयुक्त राष्ट्र द्वारा निर्धारित सतत विकास लक्ष्य—जैसे ग़रीबी उन्मूलन, शांति और समृद्धि, ज़कात के उद्देश्यों से मेल खाते हैं। मलेशिया और इंडोनेशिया में ज़कात संगठनों ने अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों के सहयोग से इस दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया है। भारत में भी सामूहिक प्रयासों के ज़रिए ग़रीबी उन्मूलन संभव है और एक परस्पर सहयोगी और न्यायपूर्ण समाज का निर्माण किया जा सकता है। ■■

आर्थिक असमानता और क्रोनी पूंजीवाद



❖सुफ़ियान अहमद

जब रोज़गार, महंगाई, समान अवसर और सामाजिक न्याय जैसे प्रश्न सार्वजनिक विमर्श के केंद्र में रहते हैं, तो यह किसी भी देश के समग्र विकास का संकेत होता है। इसके विपरीत, जब सत्ता और पूंजी के बीच अत्यधिक निकटता स्थापित हो जाती है और नीति-निर्माण कुछ चुनिंदा आर्थिक समूहों के हितों के अनुरूप ढलने लगता है, तब क्रोनी पूंजीवाद (Crony Capitalism) का उदय होता है। इस प्रवृत्ति के ख़तरों को समझना आज विशेष रूप से आवश्यक है।

संक्षेप में कहा जाए तो क्रोनी पूंजीवाद ऐसी आर्थिक व्यवस्था को जन्म देता है, जिसमें न तो समावेशी विकास संभव होता है और न ही समाज के व्यापक वर्गों का उत्थान। इसकी जड़ें राजनीतिक दलों की फंडिंग प्रणाली में निहित होती हैं। राजनीतिक दल चंदे पर निर्भर होते हैं और बड़े कारोबारी समूह निजी लाभ की उम्मीद में उन्हें वित्तीय सहायता देते हैं। भारत में राजनीतिक दलों को आयकर के दायरे से बाहर रखा जाना इस समस्या को और जटिल बना देता है।

उपलब्ध तथ्यों के अनुसार, 2018 से 2024 के बीच राजनीतिक दलों को हज़ारों करोड़ रुपये का चंदा प्राप्त हुआ, जिसमें बड़ा हिस्सा कॉरपोरेट स्रोतों से आया। इसी अवधि में यह भी देखा गया कि कुछ प्रमुख दानदाता कंपनियां बाद के वर्षों में सरकारी नीतिगत फ़ैसलों, ठेकों या नियामकीय बदलावों के दायरे में रहीं। यद्यपि इन घटनाओं के बीच प्रत्यक्ष संबंध को निर्णायक रूप से सिद्ध नहीं किया गया है, फिर भी यह परिघटना राजनीतिक फंडिंग और नीति-निर्माण की पारदर्शिता पर गंभीर प्रश्न खड़े करती है।

लोकतंत्र और पूंजी का अत्यधिक संकेंद्रण साथ-साथ नहीं चल सकते। जब संपदा कुछ हाथों तक सीमित हो जाती है, तो लोकतंत्र औपचारिक ढांचे तक सिमट जाता है। ऐसी स्थिति में सरकारें जनहित से अधिक पूंजीगत हितों के प्रभाव में नीतियां बनाने लगती हैं और राज्य धीरे-धीरे आर्थिक शक्ति का उपकरण बन जाता है।

क्रोनी पूंजीवाद की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें नियम सभी के लिए समान नहीं रहते। कर-रियायतें, लाइसेंस, प्राकृतिक संसाधनों का आवंटन और सार्वजनिक अनुबंध ऐसे तरीक़ों से संचालित होने लगते हैं, जो सीमित वर्गों को अनुचित लाभ पहुंचाते हैं। इसका परिणाम आर्थिक शक्ति के असंतुलित संकेंद्रण के रूप में सामने आता है।

यह असंतुलन केवल बाज़ार तक सीमित नहीं रहता, बल्कि लोकतांत्रिक संस्थाओं को भी प्रभावित करता है। जब निर्णय-प्रक्रिया पर आर्थिक दबाव हावी हो जाता है, तो जन-प्रतिनिधित्व औपचारिक बनकर रह जाता है। संसद,



नैतिक संकट भी है। पारदर्शिता का अभाव, संसाधनों का पक्षपातपूर्ण वितरण और सार्वजनिक विमर्श का संकुचन लोकतांत्रिक मूल्यों को कमज़ोर करता है। वास्तविक जन-समस्याएं हाशिए पर चली जाती हैं और समाज का बड़ा हिस्सा न्यायपालिका और मीडिया जैसी संस्थाएं अपनी स्वायत्तता धीरे-धीरे खोने लगती हैं।

सामाजिक स्तर पर इसका प्रभाव और गहरा होता है। असमानता बढ़ती है, मध्य और निम्न वर्ग पर आर्थिक दबाव तीव्र होता है, और सामाजिक गतिशीलता अवरुद्ध हो जाती है। संसाधनों और अवसरों तक सीमित पहुंच समाज में असंतोष और वैचारिक भ्रम को जन्म देती है।

सूचना और विचार-निर्माण की प्रक्रिया भी इससे अछूती नहीं रहती। जब मीडिया पर पूंजी का प्रभाव बढ़ता है, तो प्रश्न पूछने की संस्कृति कमज़ोर पड़ जाती है। जटिल आर्थिक समस्याओं को सतही या भावनात्मक मुद्दों में बदल दिया जाता है, जिससे वास्तविक चुनौतियां पीछे रह जाती हैं। रोज़गार, शिक्षा, स्वास्थ्य और आय जैसे बुनियादी प्रश्न गौण हो जाते हैं।

दीर्घकाल में यह स्थिति लोकतंत्र के लिए घातक सिद्ध होती है। नीतियों का निर्धारण पारदर्शिता, तर्क और जनहित के आधार पर होना चाहिए, न कि सीमित आर्थिक हितों के अनुरूप।

किसी भी देश का विकास तभी टिकाऊ और समावेशी हो सकता है, जब वहां स्वस्थ प्रतिस्पर्धा का वातावरण बना रहे। यदि नीति-निर्माण में कुछ चुनिंदा समूहों को निरंतर विशेष लाभ दिया जाए, तो आर्थिक सफलता नवाचार और दक्षता पर नहीं, बल्कि सत्ता-संपर्कों पर निर्भर हो जाती है।

यह केवल आर्थिक संकट नहीं, बल्कि राजनीतिक और अनिश्चितता से घिरा रहता है।

ऐसे समय में जन-चेतना का पुनर्जागरण अत्यंत आवश्यक है। जब नागरिक अपने जीवन से जुड़े मूल प्रश्नों को प्राथमिकता देते हैं, तब लोकतंत्र में संतुलन लौटने की संभावना बनती है। सत्ता और विपक्ष—दोनों की सक्रिय भूमिका, स्वस्थ बहस और विचार-विमर्श लोकतंत्र को जीवंत बनाए रखते हैं। लोकतंत्र को केवल सत्ता-प्रबंधन नहीं, बल्कि जनहित, न्याय और मानवीय मूल्यों की निरंतर प्रक्रिया के रूप में समझना होगा।

साथ ही, समाज और राष्ट्र के नेतृत्व की यह ज़िम्मेदारी है कि वह वैचारिक और सामाजिक कटुता को कम करे। इतिहास की कड़वाहट को आगे बढ़ाने के बजाय भविष्य की संभावनाओं पर ध्यान केंद्रित करे। नई पीढ़ी को ऐसा वातावरण मिले, जहां तर्क, संवेदना और मानवीय मूल्यों को महत्व दिया जाए।

धर्म और आस्था की व्यापक अवधारणा मानव कल्याण, सह-अस्तित्व और नैतिकता पर आधारित होती है। उसमें घृणा या हिंसा के लिए कोई स्थान नहीं है। अतः राज्य और समाज दोनों के सामने यह चुनौती है कि वे सृजनात्मक, समावेशी और दीर्घकालिक दृष्टि विकसित करें। किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थिरता और प्रगति इस बात पर निर्भर करती है कि वह क्रोनी पूंजीवाद जैसी प्रवृत्तियों को पहचान कर उनसे ऊपर उठने की वैचारिक क्षमता विकसित करता है या नहीं। ■■

समाधान

बजट और सामाजिक न्याय

❖डॉ. मुहम्मद इक़बाल सिद्दीक़ी

हर वर्ष जब सरकार देश के सामने अपना बजट रखती है, तो वह केवल आय–व्यय का हिसाब नहीं देती; वह अनकहे रूप में यह भी बता देती है कि राज्य की निगाह किस पर ठहरती है और किसकी पीड़ा उसकी दृष्टि से ओझल रह जाती है। बजट के पन्नों पर विकास की दरें, निवेश के आंकड़े और आर्थिक मज़बूती के दावे तो चमकते हैं, लेकिन ज़मीनी हक़ीक़त में भूख से जूझते परिवार, रोज़गार की तलाश में भटकते युवा, इलाज के अभाव में टूटते जीवन और बढ़ती असमानता अक्सर इन प्राथमिकताओं की सूची में पीछे छूट जाते हैं। तब यह केवल आर्थिक नहीं, बल्कि नैतिक और मानवीय प्रश्न बन जाता है—क्या हमारी आर्थिक नीतियां सचमुच समाज के अंतिम पंक्ति में खड़े आदमी के साथ न्याय कर पा रही हैं?



यहीं से क़ुरआन द्वारा प्रस्तुत न्याय-आधारित इस्लामी अर्थव्यवस्था की प्रासंगिकता हमारे सामने आती है। क़ुरआन की दृष्टि में बजट महज़ एक तकनीकी दस्तावेज़ नहीं है, बल्कि उससे आगे बढ़कर यह राज्य और समाज के बीच एक नैतिक तथा मानवीय अनुबंध है—एक ऐसा अनुबंध, जिसमें विकास की परिभाषा सबसे शक्तिशाली नहीं, बल्कि सबसे कमज़ोर व्यक्ति की स्थिति से तय होती है।

अद्ल (न्याय) व क़िस्त (संतुलन) : इस्लामी अर्थव्यवस्था की बुनियाद

क़ुरआन में अद्ल और क़िस्त केवल व्यक्तिगत आचरण के मूल्य नहीं हैं, बल्कि पूरे सामाजिक और आर्थिक ढांचे के आधार हैं। क़ुरआन कहता है : "निस्संदेह अल्लाह अद्ल (न्याय) और एहसान (भलाई) का आदेश देता है…"

(क़ुरआन 16:90)

क़ुरआन यह भी स्पष्ट करता है कि न्याय भावनात्मक नहीं, बल्कि संरचनात्मक होना चाहिए : "हमने रसूलों को स्पष्ट प्रमाणों के साथ भेजा और उनके साथ किताब और तराज़ू उतारी, ताकि लोग न्याय पर क़ायम हों।"

(क़ुरआन, 57:25)

यहां "तराज़ू" केवल नैतिक के साथ-साथ, बल्कि आर्थिक संतुलन का भी संकेत है—यानी संसाधनों, अवसरों और ज़िम्मेदारियों का न्यायपूर्ण वितरण।

न्याय आधारित इस्लामी अर्थव्यवस्था : मूल सिद्धांत

पूंजीवाद में आर्थिक व्यवस्था का केंद्र निजी लाभ, पूंजी संचय और बाज़ार की स्वतंत्रता होती है। सामाजिक न्याय अपेक्षाकृत गौण रहता है और असमानता को "स्वाभाविक परिणाम" मान लिया जाता है। समाजवाद में उत्पादन और संसाधनों का नियंत्रण राज्य के हाथ में होता है। व्यक्ति और समुदाय की भूमिका सीमित हो जाती है, और राज्य सर्वोच्च आर्थिक नियामक बन जाता है।

इस्लामी अर्थव्यवस्था न तो पूंजीवाद की तरह केवल लाभ को सर्वोच्च मानती है, और न ही समाजवाद की तरह राज्य को आर्थिक जीवन का एकमात्र केंद्र बनाती है; बल्कि यह नैतिकता, सामाजिक न्याय और सामूहिक उत्तरदायित्व पर आधारित संतुलित व्यवस्था प्रस्तुत करती है। उसका केंद्र

बिंदु है—मनुष्य और उसकी गरिमा। इसके कुछ बुनियादी उसूल हैं :

1. संपत्ति का संकेंद्रण रोकना : क़ुरआन स्पष्ट चेतावनी देता है–"…ताकि धन तुम्हारे अमीरों के बीच ही घूमता न रह जाए।" (क़ुरआन, 59:7)

इसका अर्थ यह है कि राज्य की आर्थिक नीतियां—कर प्रणाली, सब्सिडी, बजट आवंटन आदि—इस तरह हों कि धन नीचे तक पहुंचे, न कि ऊपर सिमटता जाए। आज के बजटों में यह उसूल अक्सर उलटा दिखाई देता है।

2. ज़कात, सामाजिक न्याय की संस्थागत व्यवस्था: इस्लाम में ज़कात केवल दान नहीं, बल्कि अनिवार्य सामाजिक अधिकार है। क़ुरआन कहता है–"उनके धन में मांगने वाले और वंचित का हक़ है।" (क़ुरआन, 51:19)

यह सिद्धांत आधुनिक बजट को यह सिखाता है कि ग़रीबों पर किया गया ख़र्च अनुग्रह नहीं, बल्कि न्याय की पूर्ति है। इस्लामी अर्थव्यवस्था में राज्य का दायित्व है कि कोई भी व्यक्ति भूख, इलाज या शिक्षा के अभाव में जीवन के अधिकार से वंचित न रहे।

3. रिबा (ब्याज) से मुक्त अर्थव्यवस्था : इस्लाम ब्याज को केवल धार्मिक कारणों से नहीं, बल्कि इसलिए अस्वीकार करता है कि यह सामाजिक शोषण का माध्यम है: "अल्लाह ने व्यापार को हलाल (वैध) किया है और ब्याज को हराम (निषेध)।" (क़ुरआन, 2:275)

मार्च 2025 तक भारत पर कुल विदेशी क़र्ज़ लगभग ₹ 63 लाख करोड़ पहुंच चुका है। इसका सीधा अर्थ यह है कि देश का हर नागरिक—चाहे वह नवजात शिशु हो या वृद्ध—औसतन ₹ 44,000 के क़र्ज़ का बोझ अपने हिस्से में ढो रहा है। यह क़र्ज़ केवल एक सांख्यिकीय संख्या नहीं है; यह आने वाली पीढ़ियों की आर्थिक स्वतंत्रता पर भी एक स्थायी दबाव है।

इस क़र्ज़ का सबसे गंभीर पहलू उसका ब्याज है। भारत सरकार के केंद्रीय बजट, 2025–26 (फ़रवरी 2025 में पेश) के अनुसार, केवल ब्याज चुकाने की आवश्यकता (बजटीय अनुमान) कुल ₹12.76 लाख करोड़ थी। यह आंकड़ा आंतरिक और बाहरी दोनों प्रकार के क़र्ज़ पर ब्याज को कवर करता है, जो कुल व्यय का लगभग 25 प्रतिशत और राजस्व प्राप्ति का 37 प्रतिशत है। वित्त वर्ष 2025–26 के अप्रैल से अक्टूबर 2025 तक (सात माह), सरकार ने ब्याज भुगतान पर कुल ₹6.73 लाख करोड़ ख़र्च किया। यह बजटीय अनुमान का लगभग 53 प्रतिशत है।

यहीं से एक बुनियादी सवाल उठता है—जब राज्य की आय का बड़ा हिस्सा ब्याज चुकाने में ख़र्च हो जाए, तो ग़रीबों के लिए कल्याण, युवाओं के लिए रोज़गार और समाज के लिए सुरक्षा धन कहां से आएगा? क्या ऐसी अर्थव्यवस्था वास्तव में जनहित की सेवा कर रही है, या वह समाज की ज़रूरतों को क़र्ज़ के बोझ तले दबा रही है?

क़ुरआन द्वारा प्रस्तुत न्याय-आधारित इस्लामी अर्थव्यवस्था की प्रासंगिकता हमारे सामने आती है। क़ुरआन की दृष्टि में बजट महज़ एक तकनीकी दस्तावेज़ नहीं है, बल्कि उससे आगे बढ़कर यह राज्य और समाज के बीच एक नैतिक तथा मानवीय अनुबंध है–एक ऐसा अनुबंध, जिसमें विकास की परिभाषा सबसे शक्तिशाली नहीं, बल्कि सबसे कमज़ोर व्यक्ति की स्थिति से तय होती है।

इसके विपरीत, न्याय-आधारित इस्लामी अर्थव्यवस्था ब्याज को धन कमाने का वैध साधन नहीं मानती, बल्कि उसे हराम ठहराती है। इस्लाम एक ऐसी आर्थिक व्यवस्था पेश करता है, जिसमें—धन उत्पादन से जुड़े, पूंजी और श्रम के बीच साझेदारी हो, और लाभ-हानि का जोखिम साझा किया जाए।

इस दृष्टि में पैसा स्वयं पैसा बनाने का माध्यम नहीं बनता; वह तभी बढ़ता है जब समाज के लिए कुछ उपयोगी पैदा होता है। यही कारण है कि इस्लामी अर्थदृष्टि ब्याज-आधारित क़र्ज़ को सामाजिक अन्याय का स्रोत मानती है और ऐसी अर्थव्यवस्था की पैरवी करती है, जो विकास के साथ-साथ न्याय और मानवीय गरिमा को भी सुरक्षित रखे।

4. राज्य की जवाबदेही : इस्लामी दृष्टिकोण में राज्य और उसके संसाधन शासकों की निजी मिल्कियत नहीं, बल्कि जनता की साझी अमानत होते हैं। सत्ता केवल अधिकार नहीं देती, बल्कि उससे कहीं अधिक उत्तरदायित्व सौंपती है। जो धन करों, संसाधनों और सार्वजनिक संस्थाओं के माध्यम से एकत्र होता है, वह किसी सरकार या शासक वर्ग का नहीं, बल्कि पूरे समाज—विशेषकर कमज़ोर और

वंचित वर्गों—का हक़ होता है।

इसी मूल सिद्धांत को स्पष्ट करते हुए अल्लाह के रसूल पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने फ़रमाया–"जिस व्यक्ति को हमने किसी काम पर नियुक्त किया और उसके लिए उसका पारिश्रमिक निर्धारित कर दिया, फिर वह उसके अतिरिक्त कुछ ले—तो वह 'ग़ुलुल' (अमानत में ख़यानत) है।" (सहीह मुस्लिम)

यह हदीस राज्य की नैतिक संरचना को स्पष्ट रूप से परिभाषित करती है। इसमें यह संदेश निहित है कि सत्ता में बैठा व्यक्ति सार्वजनिक धन में ज़रा-सी भी निजी मिलावट करे, तो वह केवल क़ानूनी नहीं बल्कि नैतिक और धार्मिक अपराध का दोषी होता है। इस्लाम में विकास का अर्थ केवल इमारतें, आंकड़े या बजट संतुलन नहीं, बल्कि यह देखना है कि सार्वजनिक धन का उपयोग न्याय, समानता और मानवीय गरिमा को मज़बूत कर रहा है या नहीं।

कुरआन यह सिखाता है कि आर्थिक समृद्धि तब तक अर्थहीन है, जब तक वह न्याय, संतुलन और करुणा से जुड़ी न हो। ऊंची विकास दरें और चमकते आंकड़े उस समय खोखले हो जाते हैं, जब समाज का बड़ा हिस्सा भूख, असुरक्षा और अपमानजनक स्थितियों में जीवन गुज़ार रहा हो। ऐसे में बजट केवल एक तकनीकी दस्तावेज़ नहीं रहता, बल्कि राज्य की नैतिक संवेदनशीलता की परीक्षा बन जाता है।

इस दृष्टि से, पारदर्शिता और जवाबदेही कोई वैकल्पिक नीति नहीं, बल्कि राज्य की बुनियादी नैतिक ज़िम्मेदारी है। जहां सार्वजनिक धन का उपयोग सत्ता-संरक्षण, पक्षपात या असमानता बढ़ाने के लिए हो, वहां न केवल शासन विफल होता है, बल्कि अमानत का सिद्धांत भी टूट जाता है।

आधुनिक बजट : कितना न्यायपूर्ण

आज की बजटीय नीतियों की ख़ामियां :

• सामाजिक कल्याण को ख़र्च माना जाता है, निवेश नहीं।

• मानव विकास से अधिक बाज़ार की अपेक्षाओं को तरजीह दी जाती है।

• असमानता को "स्वाभाविक" मानकर स्वीकार कर लिया जाता है।

यह दृष्टिकोण क़ुरआनी उसूल से टकराता है, क्योंकि इस्लाम में ग़रीबी को व्यवस्था की विफलता माना गया है, व्यक्ति की नहीं। पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने फ़रमाया: "तुममें से हर एक निगरां है और उसके अधीनस्थों के संबंध में उससे प्रश्न किया जाएगा। इमाम (शासक) भी निगरां है और उसकी प्रजा के बारे में उससे प्रश्न किया जाएगा।"

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

यह हदीस स्पष्ट रूप से राज्य या शासक को अपनी प्रजा की भलाई, सुरक्षा और ज़रूरतें (जैसे भोजन, वस्त्र, आवास, न्याय आदि) पूरी करने का दायित्व सौंपती है। यदि शासक लापरवाही बरते, तो वह क़ियामत के दिन जवाबदेह होगा। यह इस्लामी शासन व्यवस्था में जनकल्याण मूलभूत होता है।

बजट को न्याय का साधन बनाना

न्याय-आधारित इस्लामी अर्थव्यवस्था राज्य को यह निर्देश देती है कि :

• बजट का उद्देश्य मानव गरिमा की रक्षा होना चाहिए।

• विकास ऐसा हो जो असमानता घटाए।

• ग़रीब, अनाथ, विधवा, वृद्ध, वंचित और बेरोज़गार नीति के केंद्र में हों।

• आर्थिक शक्ति नैतिक उत्तरदायित्व के अधीन हो।

क़ुरआन यह सिखाता है कि आर्थिक समृद्धि तब तक अर्थहीन है, जब तक वह न्याय, संतुलन और करुणा से जुड़ी न हो। ऊंची विकास दरें और चमकते आंकड़े उस समय खोखले हो जाते हैं, जब समाज का बड़ा हिस्सा भूख, असुरक्षा और अपमानजनक स्थितियों में जीवन गुज़ार रहा हो। ऐसे में बजट केवल एक तकनीकी दस्तावेज़ नहीं रहता, बल्कि राज्य की नैतिक संवेदनशीलता की परीक्षा बन जाता है।

बजट यह तय करता है कि प्राथमिकता किसे दी जा रही है—पूंजी को या इंसान को, मुनाफ़े को या मानवीय गरिमा को। यदि वह असमानता को स्वाभाविक मान ले और सामाजिक कल्याण को बोझ समझे, तो वह विकास का नहीं, बल्कि संरचनात्मक अन्याय का दस्तावेज़ बन जाता है।

इस्लामी अर्थव्यवस्था के अनुसार सच्चा विकास वही है जो समाज के सबसे कमज़ोर व्यक्ति को सुरक्षा, सम्मान और आश्वासन दे। आज की सबसे बड़ी ज़रूरत भी यही है—कि बजट बड़ा नहीं, न्यायपूर्ण हो। ■■

क़ौम के अह्ले-सर्वत और अह्ले-ख़ैर हज़रात से ख़ुसूसी अपील

यतीमख़ाना इस्लामिया गया

आपके माली तआवुन का मुंतज़िर है

108 साल की ख़िदमात



तआरुफ़ इदारा की बुनियाद अक्तूबर 1917 में एक उस्ताद और दो यतीम बच्चों से आठ आने (50 पैसे) माहवार किराया की कोठरी में Rs. 30 रुपये की छोटी-सी रक़म से पड़ी थी **तालीमी साल :** अप्रैल ता मार्च **तालीमी मराहिल :** इब्तिदाई, • सानवी, • आला, • शोबा-ए-हिफ़्ज़ व नाज़रा, • इनायत (I.T.I.) • पांच जवानों में तालीम • अरबी • उर्दू • फ़ारसी • हिन्दी • अंग्रेज़ी • तादाद ज़ेरे-तालीम तलबा व तालिबात : तक़रीबन 450 **• तादाद कुल यतीम तलबा** 60 • बेरूनी तलबा, जो अपना ख़र्च देकर हॉस्टल में रहते हैं, उसके अलावा हैं। • तादाद तदरीसी व ग़ैर-तदरीसी स्टाफ़ : 28 **सालाना ख़र्च :** चालीस लाख (RS. 40,00,000) रुपये से ज़्यादा। **ज़रिया आमदनी :** मुस्लिम अवाम के चंदे। **ख़र्चे :** यतीम तलबा का सारा ख़र्च (तआम, क़ियाम, रिहाइश वग़ैरा बिल्कुल मुफ़्त [Free]) ये सारा ख़र्च इदारा पूरा करता है। किसी तरह का कोई ख़र्च नहीं लिया जाता है। **याद रखें :** (1) यहां का कोई भी मुहस्सिल कमीशन या उजरत पर चंदा वसूल नहीं किया करता है। (2) पांच ज़बानों में क़ुरआन व इस्लामियात के साथ क्लास 1 से मैट्रिक (Matric) तक (जो बिहार बोर्ड से मंज़ूरशुदा है) मेयारी तालीम दी जाती है। • हिफ़्ज़ के साथ-साथ मैट्रिक का नज़्म (3) 108 साल से इदारा यतीम और ग़ैर-यतीम तलबा की इस्लामी माहौल में दीनी व असरी तालीम के साथ तालीमी व तरबियती ख़िदमात अंजाम दे रहा है। (4) इदारा ही के अहाते (Campus) में दो हरे-भरे पार्क के साथ शानदार मस्जिद, तालीमगाह, इक़ामतगाह, मतबख़ और दूसरे शोबे वग़ैरा हैं • इसलिए तलबा को कहीं आना-जाना नहीं पड़ता है। **कफ़ाला स्कीम (Sponsorship)** के तहत एक यतीम तालिब-इल्म का सालाना ख़र्च तीस हज़ार रुपये RS. 30,000 है। आप भी इस कारे-सवाब में शरीक हों। • यहां के तलबा को मैट्रिक (Matric) पास करने के बाद कॉलेज के अलावा अरबी यूनिवर्सिटी में आलिमियत के पहले व दूसरे साल में आसानी से दाख़िला मिल जाता है। (5) यतीमख़ाना से मैट्रिक पास करने वाले यतीम तलबा का दाख़िला यतीमख़ाना के इनायत (I.T.I.) में बिल्कुल मुफ़्त (Free) है। उनसे किसी तरह का कोई ख़र्च नहीं लिया जाता है। पहले ही की तरह रहने-सहने और खाने-पीने की सारी सहूलियात दी जाती है। **अपील :** इस माद्दापरस्ताना (Materialistic) और जदीद दौर में दीनी व असरी उलूम के रिहाइशी (Residential) इदारों की पहले से कहीं ज़्यादा ज़रूरत है। • आप आसमान छूती महंगाई में इदारा की भरपूर माली मदद करें। तआवुन की मुख़्तलिफ़ शक्लें हैं जैसे • ज़कात • अतियात • सदकात वग़ैरा और इदारा के बाक़ी तालीमी व तामीरी मन्सूबों के लिए भी रुपये की बहुत ज़रूरत है। इदारा आपसे नन्हे-मुन्ने मासूम यतीम बच्चों को तालीम के साथ-साथ बाहुनर बनाने के लिए और उन्हें ऊंचा उठाने के लिए फ़राख़दिलाना माली तआवुन की अपील करता है।

नोट : इदारा की मुख़्तसर तारीख़ दस्तावेज़ी फ़िल्म (Documentary Film) नज़रे-इनायत (Nazr-e-Enayeth) यू-ट्यूब (You Tube) पर देखें।

चैक व ड्राफ़्ट और कोर बैंकिंग स्लिप पर सिर्फ़ यह लिखें : THE GAYA MUSLIM ORPHANAGAE

बराए राबिता चैक व ड्राफ़्ट और मनीऑर्डर भेजने का पता

Hon. Secretary, THE GAYA MUSLIM ORPHANAGE,
Cherki-824237, Distt. : Gaya (Bihar) India

Mobile : 9801213022, Whatsapp No. : 7258063440

Beneficiary Name
THE GAYA MUSLIM ORPHANAGE
Bank A/C No.: 300402010010581 (ज़कात/Zakath)
Bank A/C No.: 300402010002982 (डोनेशन/Donation)
Bank IFSC Code No: UBIN0530042
Bank: UNION BANK OF INDIA
(MAIN BRANCH GAYA)

Scan & Pay

याद रखें : बैंक में रक़म ट्रांसफ़र की तफ़्सील बराए-मेहरबानी स्कैन एंड पै पर (Scan & Pay) या किसी ज़रिये से रक़म ट्रांसफ़र के बाद स्क्रीन शॉट (Screen Shot) और नाम व पता ऊपर के व्हाट्सऐप नम्बर पर भेज दें ताकि रसीद भेजी जा सके।

इंजीनियर मुहम्मद हसनैन ख़ान (सदर)
9631867066

डॉक्टर जेड. एच. ख़ान
एज़ाज़ी सेक्रेट्री

E-mail : gmocde@yahoo.com.in
Website : www.gmogaya.in

पटना ब्रांच ऑफ़िस : पटना शहर के हमदर्द अपना चैक व ड्राफ़्ट और रक़म देने के लिए इनसे राबिता क़ायम करें।
जनाब ग़ुलाम मुहम्मद ख़ां (सदर) समनपूरा, पटना, मोबाइल : 9934943229
जनाब इंजीनियर मुहम्मद हसनैन ख़ां, समनपूरा, पटना, मोबाइल : 9631867066

"विश्वास, आस्था, नैतिकता और नागरिक दायित्व"

❖जुनैद अली

मानव जीवन के आशय, अस्तित्व और इसकी प्रगतिशीलता को विवेक के आधार पर समझने का प्रयास करते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि विश्वास जीवन का मौलिक गुण है जो हमें आंतरिक रूप से मज़बूत, बाहरी रूप से सक्षम और मानसिक रूप से शांत रखता है, जिससे हम हर परिस्थिति में सकारात्मक मनोदृष्टि के संग आगे बढ़ पाते हैं क्योंकि विश्वास के माध्यम से जीवन के अर्थ को बहुत ही निकटता से समझा जा सकता है और विश्वास के बलबूते निर्मित होने वाला सहयोग एवं सामंजस्य की भावना तथा विचार सामूहिक प्रगति का आधार है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि सभी आयामों पर विश्वास एक केन्द्रीय पक्ष है और इसके अभाव में कोई भी सामाजिक, भौतिक, आर्थिक, राजनैतिक और आध्यात्मिक यात्रा मापने योग्य वास्तविक विस्थापन निश्चित नहीं कर सकतीं है। यह स्पष्ट है कि विश्वास सकारात्मक वातावरण को साकार करते हुए परिधि को समावेशी बनाते हैं जो मानव जीवन को अनुकूलता प्रदान करती है।

सहानुभूति, करुणा, परस्पर सहयोग तथा सामंजस्य का बीजारोपण करने के लिए विश्वास की अनिवार्यता सर्वोपरि है और इसकी प्रतिपूर्ति ही मानव जीवन को ख़ुशहाल और संतुलित बनाती है, जो आध्यात्मिक और भौतिक विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यदि बहुत ही संक्षेप में समझने का प्रयास किया जाए तो विश्वास एक अदृश्य डोर है जो जनसमूहों को बांधे रखते हुए सामाजिकता को मानवीय मूल्यों पर खड़े होने का साहस देता है और इसके बिना सामाजिक विचार तथा भौतिक संसाधनों के बावजूद भी एक प्रगतिशील और सामंजस्यपूर्ण समाज का निर्माण करना असंभव है। वास्तविक रूप में विश्वास उत्कृष्ट सामाजिकता का नींव है और विश्वास का स्तंभ निर्विवाद रूप से आस्था की ज़मीन पर ही खड़े होते हैं। ऐसा इसलिए क्योंकि आस्था भावनाओं और आंतरिक निष्ठा से जुड़कर कर्मों को प्रेरित करती है।

यह स्पष्ट है कि विश्वास और आस्था, दोनों भरोसे के घटक है लेकिन दोनों के मध्य महत्वपूर्ण अंतर यह है कि विश्वास बहुधा तर्क, अनुभव, किसी व्यक्ति विशेष अथवा उसके विचार पर या किसी शोध के परिणाम पर आधारित होता है लेकिन आस्था विश्वास का ही बहुत ही उच्च स्तर है जिसमें पूर्ण समर्पण, निष्ठा और श्रद्धा विद्धमान रहती है यानी भावनात्मक जुड़ाव, आंतरिक निश्चय, तार्किकता और अनुभूतियों एवं प्रमाणों के श्रेष्ठतम तालमेल का निष्कर्ष ही आस्था है। आस्थावान बनने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि जो कुछ दिखाई दे रहा है उसके प्रति समर्पित हुआ जाएं बल्कि भावनाओं, अनुभवों तथा विवेक के माध्यम से उस सर्वोच्च एवं सर्वोपरी शक्ति को पूरी गहनता से तलाश की जाएं जो वास्तविक रूप में सकल सृष्टि का स्वामी है। इसी खोजीं अभियान के ज़रिए धार्मिक तथा आध्यात्मिक यात्रा की शुरुआत होती है जो जीवन के औचित्य तथा प्रयोजन को निर्धारित करते हुए निराशाजनक स्थितियों से विरक्त होने की क्षमता देने के साथ आशाओं का दीप जलाकर आशंकाओं को दूर करतीं हैं। मानव में सृष्टि के स्वामी से संबंधित विविध विचार है जिसके आधार पर विभिन्न धर्मों, दर्शनों तथा मान्यताओं का जन्म हुआ लेकिन पूरी दुनिया की जनसंख्या की बहुसंख्यक हिस्सा इस बात पर सहमत हैं कि इस सकल सृष्टि का एक रचियता है और वही सर्वोत्कृष्ट एकमात्र शक्ति है जो प्राकृतिक एवं खगौलीय जीव एवं निर्जीव घटकों को गतिशीलता दिए हुए है।

एक अमेरिकी थिंक टैंक प्यू रिसर्च सेंटर जिसे जनसंख्या के स्वभावों में बदलावों और रुझानों पर डेटा-आधारित रिपोर्ट तैयार करने में महारत हासिल और संस्था द्वारा जारी किए गए तथ्यों को पूरी दुनिया बहुत गंभीरता से लेती है। इसकी कुछ महीनों पहले रिलीज की गई एक रिपोर्ट के

अनुसार साल 2020 तक दुनिया की कुल जनसंख्या का 75.8 प्रतिशत अंश किसी न किसी धर्म का अनुयायी था और 24.2 प्रतिशत अंश ने दुनिया की सभी धर्मों से दूरी बनाए रखी। यानी दुनिया की तीन चौथाई हिस्सा धार्मिक तथा आध्यात्मिक विचारों को प्राथमिकता दिए हुए है। यह स्पष्ट है कि वैश्विक स्तर पर आस्तिकता और नास्तिकता आधारित जनसंख्या का अनुपात ही यह सहजता से साबित कर देता है कि आध्यात्म मानव जीवन के प्रति कितनी अनुकूलता रखता है। इसके बावजूद भी नास्तिकों के जीवन की परतों को पूरी संवेदनशीलता तथा स्नेह के साथ उधेड़ा जाएं तो यह संभव है कि उनका बहुसंख्यक तबक़ा आस्था का पूरी तरह से परित्याग या आस्था के विचारों को अपदस्थ नहीं किया है बल्कि दूरी के बावजूद आस्था के महत्व को रेखांकित करते हुए भी मानव व्यवस्था के लिए अनिवार्य घोषित करता है है।

प्रसिद्ध विचारक वोल्टेयर का यह कथन था कि,"यदि ईश्वर का अस्तित्व नहीं होता, तो उसे गढ़ना आवश्यक होता," यह दर्शाता है कि सामाजिक व्यवस्था, नैतिकता और न्याय के लिए एक उच्च शक्ति या अलौकिक अवधारणा आवश्यक है और इसी आध्यात्मिक दृष्टिकोण के तहत लोगों को नियंत्रित करते हुए समाज को मूल्यों पर सुचारू रूप से अग्रसर किया जा सकता है। यानी आस्था के आधार पर न केवल सामाजिक सामंजस्यों को बढ़ावा मिलता है, बल्कि लोग अनुशासन के प्रति सजग होते हुए कर्तव्यनिष्ठ बनते हैं, जिसके आधार पर एक उत्कृष्ट व्यवस्था को मानवीय सरोकारों के तहत गतिशील रखा जा सकता है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि वोल्टेयर के विचार आस्था के औचित्य को प्रमाणित करता है और यह खुलेतौर पर दर्शाता है कि आवरण कुछ भी हो लेकिन आवेश रहित मानव मस्तिष्क और हृदय, जहां पर अनुभवों के संयोजन से विचार प्रस्फुटित होते हैं उनका झुकाव हमेशा आस्था के प्रति स्थापित रहा है और इस बात की संतोषप्रदता रही हैं कि ईश्वर के प्रति समर्पण की भावना ही मानव को सजीवता के शिखर तक पहुंचा सकता है।

अब इसके बावजूद भी दुनिया में नास्तिकता में क्यों बढ़ोत्तरी हुई? इसके एक नहीं बल्कि कई कारण हैं। लेकिन यदि कोई धार्मिकता से दूर हुआ है, तो वह दूसरों की बजाय स्वयं कहीं अधिक उत्तरदायी है क्योंकि सत्य की खोजी यात्रा जारी रखने के स्थान पर कुछ कथित आस्तिक संगठनों के आडंबरों को विचलन का मुख्य कारक बताकर आध्यात्मिक मार्ग को ही त्याग देना संवेदनशील होने का सूचक नहीं है, बल्कि विमुखता गंभीर प्रश्न खड़े करता है। यदि किसी मान्यताओं का पाखंड तथा भ्रष्ट व्यवहारों का पर्दाफ़ाश या पोल खुल चुका था तो प्राकृतिक को देखते हुए अपनी आत्मा की आवाज़ को ध्यानपूर्वक सुनते हुए धैर्य के साथ सत्य की तलाश जारी रखनी चाहिए थी और यही कर्तव्यनिष्ठा वास्तविक आराध्य तक पहुंचाने का सहज मार्ग उपलब्ध कराने का सामर्थ्य रखता है। आस्था से विरक्ति आत्म-बल की दुर्बलता अथवा शिथिलता के सिवाय कुछ भी नहीं और इस भटकाव की स्वीकृति मानवीय सभ्यता और समाज के लिए किसी विभीषिका से कम नहीं है। नास्तिक लोगों के बारे में पड़ताल की जाएं तो यह स्पष्ट स्थिति सामने आती हैं कि इस समूह में बहुसंख्यक हिस्सा आर्थिक रूप से संपन्न हैं और विकसित देशों में विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं यानी कि एक अति आवेशित जीवन गुज़ार रहे हैं तो उनकी भौतिकवादी दृष्टिकोण आस्था के प्रति प्रतिबद्धता के बजाय प्रतिरोधक क्षमता दर्शाएं, यह कोई अभूतपूर्व स्थिति नहीं है क्योंकि आस्था शांत मस्तिष्क और हृदय की तृष्णा है।

जबकि यह स्पष्ट है कि यदि कोई भी व्यक्ति खगौलीय पिंड यानी कि अंतरिक्ष में सक्रिय प्राकृतिक चीज़ें ग्रह, तारें, चंद्रमा, क्षुद्रग्रह, धूमकेतु, निहारिका और आकाशगंगाओं के बारे में थोड़ी-सी भी स्पष्ट जानकारी जुटा लें तो उसे इस बात का विश्वास हो जाएगा कि यह सृष्टि बस यूं ही अस्तित्व में नहीं आ गई बल्कि इसका कोई रचयिता है, वहीं ईश्वर है और उसकी रचनात्मकता में कोई साझीदार नहीं है, तनिक-सा भी नहीं। फिर इसके बाद दिन का रात और रात का दिन में बदलना, मिट्टी से हरियाली और सतरंगी फूल और फलों की पैदावार, सभी खनिजों तथा धातुओं का मानव जीवन को उत्कृष्ट बनाने में उपयोग, वायु में जीवनदायिनी गैसों का निश्चित अनुपातों में मिश्रण, आकाश में न दिखाई देने वाली परतें, हिमखंड की विशाल श्रृंखलाओं का जीवन में महत्व, भूमि के चारों ओर समुंदरी घेराव जिसका अवलोकन करते हुए यह सोचने का प्रयास किया जाए कि, "क्या इन सारी चीज़ों को कोई व्यक्ति अथवा मानव का समूह नियंत्रित कर रहा है या यह सब कुछ स्वत: संयमित है?" वास्तविकता यही है कि दोनों स्थिति संभव नहीं है बल्कि दशा यह खुलेतौर पर प्रमाणित करती है कि सारी चीज़ें किसी एकल अदृश्य

तथा निराकार शक्ति के नियंत्रण में रहते हुए अनुशासित ढंग से गतिमान है और किसी भी साझीदारी को स्पष्टता के साथ नकारती है।

हालांकि इसे स्वीकार करने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि ईश्वर के प्रति कमज़ोर विश्वास का यह भी परिणाम सामने है कि अलौकिक ईश्वरीय गुणों में साझीदार निर्धारित कर दिया गया और इसके पश्चात् आस्था के विभिन्न केन्द्र बन गए। जिसने अतिमहत्वपूर्ण समझें जाने वाले आध्यात्मिक यात्रा को दिशाहीन बनाते हुए मानव को कृत्रिम आस्था के खांचों में विभाजित कर दिया और इसके पश्चात् की फिसलन ने नास्तिक समूह को खड़ा होने का साहस दे दिया। प्यू रिसर्च सेंटर का शोध यह बताता है कि इंटरनेट तथा सूचना क्रांति के दौर ने कथित आस्थाओं की कपट और छलावा को सतहों पर ला दिया जो नास्तिकता को बढ़ावा देने की बड़े कारणों में से एक है लेकिन दूसरी ओर रिसर्च यह भी महत्वपूर्ण तथ्य सामने रखता है कि बीते दशक में वैश्विक स्तर पर अत्यंत विरोधाभासी रुझानों तथा दुष्प्रचारों की चुनौतियों का सामना करते हुए भी इस्लाम धर्म सबसे तेज़ बढ़ोत्तरी दर्ज करने में सफल थीं।

अब सवाल उठता है कि जब इंटरनेट आधारित सोशल मीडिया और सूचना क्रांति के औज़ारों ने हर विचारधारा की परतों को निर्दयतापूर्वक उधेड़ा है तो कैसे इस्लाम को अनुकूलता प्राप्त हुई? क्या इस्लाम का ऐकेश्वरवादी सिद्धांत अंधड़ों के बीच भी अपनी प्रासंगिता बनाए हुए हैं? क्या इस्लाम का बिना विभेद किए सामाजिक समरसता का सिद्धांत आकर्षण पैदा कर रहा है? क्या इस्लाम का बिना अंतर किए पड़ोसियों की सुरक्षा तथा उनके प्रति सेवा भाव की बाध्यता वैश्विक बिरादरी को रिझाने में सफल हो रहीं हैं? क्या इस्लाम का अहिंसात्मक उपाय तथा मानव के प्रति दया दृष्टि के आधार मानवाधिकारों की सुरक्षा लोगों को जागरूक कर रहीं हैं? क्या इस्लाम का महिलाओं के प्रति दिखाई गई उदारता और शिक्षा की अनिवार्यता लोगों को अपील कर रही है? क्या इस्लाम का अपराधों तथा सामाजिक विकारों के प्रति कड़ा रुख़ लोगों का ध्यान खींच रहा है? या इस्लाम का धर्म संबंधित मामलों में दबावरहित तथा बिना ज़ोर-ज़बरदस्ती का सिद्धांत लोगों पर चुम्बकीय प्रभाव डाल रहा है? हालांकि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर इस्लाम के तेज़ी से बढ़ने के पीछे मुसलमानों की उच्च प्रजनन क्षमता का उल्लेख कर बड़े तथा गंभीर सवालों का संकीर्ण एवं तुच्छ उत्तर रखा जा सकता है लेकिन यह विश्वास तथा चेतना के विरुद्ध स्थिति होगी, बल्कि अनिवार्यता इस बात की है कि किसी धर्म के उत्थान तथा पतन को पूरी संवेदनशीलता और एकाग्रता से देखते हुए वास्तविक ईश्वर की तलाश को न्यायिक निष्कर्ष तक पहुंचाया जाए।

यह स्पष्ट है कि बहुध्रुवीय आस्था की परिक्रमा ने मानव को सफलता के मूल पथ से विरक्त करते हुए भटकाव की विभीषिका के कगार पर पहुंचा दिया। इसका परिणाम यह सामने आया कि सृष्टि का स्वामी किसे माना जाए इसे लेकर हर धर्म और संस्कृति की अपनी विशेष मान्यताएं हैं लेकिन यह व्यक्ति विशेष के आध्यात्मिक दृष्टिकोण पर निर्भर करता है कि वह अपनी आध्यात्मिक यात्रा तथा अनुभवों के संयोजन से प्राप्त निष्कर्ष के प्रति कितना न्यायिक और जवाबदेह हैं या फिर परंपराओं, सुनी-सुनाई अथवा आयातित विचलित आस्थाएं जो सैद्धांतिक मापदंडों की पूर्ति करने में असक्षम तथा अनुपयुक्त है, उसी को अविवेकपूर्ण ढंग से आस्था का आधार मान लिया। यह स्पष्ट है कि वास्तविक आस्था मानसिक तथा आत्मिक तौर पर जीवन को संतुष्ट करतीं हैं और विषम परिस्थितियों में भी आत्म-बल एवं आत्म-विश्वास को स्थापित रखतीं हैं और इसी श्रेष्ठ विश्वास के माध्यम से भू-लोक में मानवीय सरोकारों को बढ़ावा मिलता है।

यदि विभिन्न धर्मों में आस्था के भाव अथवा ईश्वर के प्रति समर्पण को समझने का प्रयास किया जाए तो यह पूरी स्पष्टता के साथ अनुभव होता है कि इस्लाम के अतिरिक्त अन्य समुदायों ने ईश्वरीय मार्गदर्शन के लंबे सिलसिले के किसी पड़ाव को अंतिम रूप मानते हुए ठहर गये और माध्यम को ही ईश्वर का साझीदार या तुल्य मान लिए जो मानव के बीच विषमताओं का मुख्य कारक है लेकिन आराध्य, पूजा पद्धति, मान्यताओं तथा रीति-रिवाज की विविधताओं के बावजूद भी विभिन्न धार्मिक समुदायों के बीच व्यापक समानताएं है जैसे कि कर्मों के हिसाब-किताब के आधार पर स्वर्ग-नर्क, अच्छे तथा अनुशासित कर्मों को प्राथमिकता में रखना, सभी धर्मों ने प्रेम, दया एवं मानवीय गरिमा के महत्व पर अत्यधिक ज़ोर डाला, सभी धर्मों का लक्षित प्रयास आंतरिक शांति, ज्ञान और आत्म-सुधार प्राप्त करना और नैतिकता की उच्च स्तर तक पहुंचने को अतिश्रेष्ठ प्रयासों के रूप में निरुपित किया

है यानी न्यायिक भावनाओं को वरियता, मानवाधिकारों का सम्मान, सत्य बोलना, ईमानदारी, अहिंसा, दया, करुणा, सामुदायिक सामंजस्य और निशक्तजनों की सहायता करना जैसे नैतिक मूल्यों को सभी धर्मों ने महत्वपूर्ण माना है।

यदि बहुत ही संक्षेप में समझा जाए तो दुनिया के धर्मों के बाहरी स्वरूप अलग हो सकते हैं, लेकिन उनके मूल संदेश में प्रेम, सत्य, सेवा, शांति और आंतरिक अनुशासन केंद्रीय पक्ष और मानवीय मूल्यों से संबंधित शिक्षाएं बहुत हद तक एक-दूसरे से मिलान खाती है। हालांकि धर्मों के बीच समानताओं को भी गहराई से समझने की आवश्यकता है, क्योंकि व्याप्त आस्थाओं के मध्य स्पष्ट अंतर किसी आध्यात्मिक यात्रा को गंतव्य तक पहुंचा सकता है और इसे इस तरह से देखा-समझा जा सकता है कि मदिरापान को सभी धर्मों ने निकृष्ट माना लेकिन इस्लाम यह कहता है कि जब शराब व्यक्ति, परिवार और समाज के लिए अत्यंत हानिकारक है तो इसे मात्र दोषपूर्ण मानना उचित नहीं होगा, बल्कि इसे पूर्णतः वर्जित घोषित करते हुए इसके उत्पादन, विक्रय और उपयोग को प्रतिबंधित किया जाना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि नैतिकता धार्मिकता के द्वारा ही प्राप्त हुई है और कोई यह कहे कि नैतिक मूल्यों का जन्म संयुक्त राष्ट्र के दफ़्तर या मानव निर्धारित किसी लोकतांत्रिक एवं धर्मनिरपेक्ष भौगोलिक परिधि में हुआ है तो यह किसी भी परिस्थितियों में स्वीकार करने योग्य नहीं हो सकतीं, बल्कि यथार्थता यही है कि आज जो कुछ भी नैतिकता देखा, समझा या जिसका अनुभव तथा अनुपालन किया जा रहा है वे सब कुछ धार्मिकता के अंश हैं।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में दुनिया कई भौगोलिक सीमाओं में बंटी हुई है, लेकिन यह मानने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि जिन सीमाओं के भीतर नैतिक मूल्यों की श्रेष्ठता है उस देश के नागरिक अपने दायित्वों के निर्वहन के प्रति अत्यंत जागरूक हैं। समान रूप से प्रत्येक देश के नागरिकों के दायित्वों में यह स्पष्टता से रेखांकित है कि राष्ट्र के संविधान, क़ानूनों और राष्ट्रीय प्रतीकों का सम्मान करना, देश की संप्रभुता तथा अखंडता की रक्षा करना, आवश्यकता अनुसार मतदान तथा सलाह देना, महिलाओं तथा कमज़ोर वर्गों का सम्मान, करों का भुगतान करना, सार्वजनिक संपत्ति की सुरक्षा करना, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना, राष्ट्र निर्माण में सक्रिय भागीदारी करना और सबसे महत्वपूर्ण माना जाने वाला दायित्व आंतरिक सतहों पर हर स्थिति में भी सामाजिक सद्भाव और शांति स्थापित रखा जाना अनिवार्य है, क्योंकि स्थिरता तथा शांत वातावरण विकास और श्रेष्ठता की ओर ले जाने वाली मानसिकता को पोषित करते हैं। यह स्पष्ट है कि धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र का विचार सामाजिक सद्भाव एवं सामंजस्य को स्थापित तथा बढ़ावा देने के लिए ही अधिकृत किया गया था।

धर्मनिरपेक्षता का आशय यह बिल्कुल भी नहीं है कि परिधि में धार्मिकता को प्रतिबंधित किया जाएगा, बल्कि वास्तविकता यह है कि राज्य सभी धार्मिक तथा समुदायिक मामलों में तटस्थ रहेंगी और धार्मिक मान्यताओं एवं प्रकरणों में हस्तक्षेप नहीं करेंगी यानी धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र की सरकारें तुष्टिकरण की नीतियों की बजाय बहुलतावादी विचारों पर केंद्रित होते हुए सामूहिक कल्याण की नीतियों का अनुसरण करेगी और धार्मिक संगठनों को अपनी विचारधारा से लोगों को परिचित कराने की छूट होगी। इन्हीं सिद्धांतों को लोकतांत्रिक व्यवस्था की रीढ़ माना गया, लेकिन वैश्विक स्तर पर लोकतांत्रिक मूल्यों को मापने वाली संस्था फ्रीडम हाऊस की पिछले कुछ सालों की रिपोर्ट और धर्मनिरपेक्ष देशों में जो खलबली मची हुई है उसे देखें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि दुनिया के लोकतांत्रिक देश अपने घोषित मूल्यों के प्रति गिरावट दर्ज करते हुए संकटकालीन परिस्थितियों से गुज़र रहे हैं।

दुनिया के लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में व्याप्त उत्पीड़न तथा संघर्ष की स्थिति यही उजागर करती है कि सत्ता सीधे तौर पर धार्मिक प्रतीकों एवं पहचान, बहुसंख्यकों की तुष्टिकरण या किसी वर्ग विशेष की मान्यताओं की वाहक बन गई जो सामूहिक एकता एवं सद्भावना के आड़े आते हुए लोकतांत्रिक व्यवस्था को निर्जिव बनाने की ओर अग्रसर है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में वैश्विक चिंता का विषय यह है कि लोकतांत्रिक धर्मनिरपेक्ष देशों की सरकारें धर्म एवं वर्गों को एक राजनैतिक हथियार के तौर पर उपयोग लाते हुए अपने वर्चस्व को मज़बूत बनाने की दिशा में प्रयासरत हैं, लेकिन बहुत ही सोची-समझी तथा षड्यंत्रकारी नीतियों के तहत धर्मनिरपेक्षता तथा समाजवाद का मखौल उड़ा रही हैं। यह शीशे की तरह साफ़ है कि राज्य का न्यायिक भावना दिखाने की बजाय पक्षपाती बनना और धर्म विशेष की तुष्टिकरण की नीतियों को अपनाकर नफ़रतों को बढ़ावा देना न सिर्फ़ राज्य की मौलिकता बल्कि जनता की चेतना, विश्वास और आस्था पर भी गंभीर प्रश्न खड़े करता है और निर्मित होने वाली स्थिति स्पष्ट रूप से आध्यात्मिक दृष्टिकोण की विफलता को दर्शाता है। ■■

प्रेरणा

हिजाब ने इस्लाम तक पहुंचाया

❖वारिस हुसैन

फ़िलिक्सिया यीप एक पूर्व मॉडल हैं, जो प्लेबॉय और एफ़एचएम जैसी पत्रिकाओं के लिए पोज़ देती थीं। वह कार शोज़ और ब्यूटी पेजेंट में भी दिखाई देती थीं। उनका करियर तेज़ी से उठान की ओर जा रहा था, परन्तु कुछ ऐसा हो गया कि उनके निर्णय से ग्लैमर और फ़ैशन की दुनिया स्तब्ध रह गई। जुलाई 2014 को फ़िलिक्सिया ने आधिकारिक तौर पर इस्लाम धर्म स्वीकार करने कि घोषणा की और धन, दौलत और प्रतिष्ठा की वर्षा करने वाले अपने करियर को छोड़ने का निर्णय भी सुना दिया। किसी को समझ में नहीं आ रहा था कि अपने मॉडलिंग करियर के शीर्ष पर एक लड़की ने अपनी असाधारण जीवनशैली को छोड़ने और इस्लाम धर्म अपनाने का फ़ैसला आख़िर क्यों किया? आइए इसका उत्तर जानने की कोशिश करते हैं।

यीप का जन्म वर्ष 1986 में मलेशिया में हुआ था। धर्म के साथ उनके शुरुआती अनुभव उन्हें इसकी ओर आकर्षित करने में असफल रहे। वह कहती हैं, "मैं हर रविवार शाम को कैथोलिक चर्च में जाती थी और मैंने ईसाई धर्म को समझने का भरपूर प्रयत्न किया पर मुझे इसमें संतुष्टि प्राप्त न हो सकी।" वह आगे बताती हैं कि,"मैंने बौद्ध प्रथाओं को अपनाने की भी कोशिश की लेकिन मेरे दिल को कभी भी भगवान से निकटता प्राप्त न हो सकी और मुझे इनमें किसी भी प्रकार की संतुष्टि का अनुभव न हो सका।"

अपने करियर को आगे बढ़ाते हुए उन्होंने 2005 में मॉडलिंग भी शुरू कर दी और टीवी कार्यक्रम "आई वाना बी ए मॉडल" के तीसरे सीजन में दिखाई दीं। उनका करियर उस समय अपनी पराकाष्ठा को पहुंच गया जब वर्ष 2009 में उन्हें "वेलोसिटी एंजेल्स मॉडल ऑफ़ द ईयर" का ताज पहनाया गया। पर मॉडलिंग में प्रसिद्धि और सफलता की चरम सीमा तक पहुंचने के बाद भी वह स्वयं को बहुत खोखला और शोषित महसूस करती थीं। वह कहती हैं कि बहुत-से ऐसे अवसर आये जब मैंने स्वयं को बिल्कुल टूटा हुआ महसूस किया पर मैंने अपने-आपको फिर से उठाया शायद इसलिए की मैं दुबारा टूट सकूं। वह अपने बारे में बताती हैं कि उन्हें कैमरे के सामने पोज़ देने और रनवे पर चलने का बहुत शौक़ था पर उन्हें बहुत ज़्यादा प्रसिद्धि और किसी बहुत धनवान व्यक्ति से शादी करने जैसी इच्छा कभी नहीं रही।

फिर वर्ष 2013 में कुछ ऐसा हो गया जिसने उनके जीवन को और उनकी सोच को पूरी तरह बदल कर रख दिया। एक फ़ोटोशूट के दौरान उन्हें इस्लामिक हिजाब पहनने का प्रस्ताव मिला। वह कहती हैं कि शूटिंग के लिए जब उन्होंने हिजाब धारण किया तो ख़ुशी और सुरक्षा की अभूतपूर्व भावनाएं उनके हृदय में उमड़ पड़ीं और उन्हें हिजाब में एक प्रकार की मुक्ति का एहसास हुआ और हृदय में यह भावना जागृत हुई की उन्हें अपने शरीर को और अधिक ढकना चाहिए।" हिजाब ने उन्हें एक महिला के रूप में अपनी मर्यादा को पहचानने का अवसर दिया।

वह अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हुए कहती हैं कि "मुझे विश्वास हो गया की एक महिला के रूप में यह मेरी मर्यादा के विपरीत है कि मैं अपने शरीर का प्रदर्शन करती रहूं। और मुझे अब इसमें कोई प्रसन्नता और गर्व की भावना नहीं प्रतीत होती की अपने शरीर और अंग-प्रदर्शन करने वाली मॉडल्स उन्हें अपने आदर्श के रूप में देखें। मैं नहीं चाहती कि अपने करियर के ढल जाने के बाद जब वह स्वयं को अकेला और खोखला महसूस करें तो उसका दोष मुझे दें।

अब मैं कुछ गहरी बातों की खोज में लग गई। एक धर्म, एक ईश्वर और जीवन व्यतीत करने का एक आदर्श तरीक़ा। अब मैं स्वयं को और ढंक कर रखने का प्रत्यन करने लगी और चाहती थी कि मेरी पहचान मेरे अंग-प्रदर्शन से नहीं बल्कि उससे हो जो मैं अन्दर से वास्तव में हूं। यदि कोई धर्म और आस्था मुझे यह मार्ग दिखा सकती है तो मुझे उसको समझने का प्रयत्न अवश्य करना चाहिए। उससे मात्र इसलिए घृणा क्यों की जाए जबकि कुछ थोड़े से भ्रमित और भटके हुए अतिवादी लोग उसकी वास्तविकता को तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत कर रहे हैं।"

इस्लाम के गहरे अध्ययन के पश्चात एक दिन उन्होंने इसे स्वीकार लिया। जिस दिन वह मुस्लिम बनीं, उसके बारे में वह कहती हैं, "आज मेरे लिए एक ऐतिहासिक दिन है। यह पुनर्जन्म की तरह है। मुझे उम्मीद है कि हर कोई प्रार्थना करेगा कि मैं अपनी नई यात्रा में दृढ़ और प्रतिबद्ध रहूं।"

इसके बाद से उन्होंने अपना नाम बदलकर "रईसिया रनिया यीप" रख लिया। ■■

लघुकथा

नया हस्तिनापुर

❖सुफ़ियान अहमद

सभा भव्य थी। मंच पर आधुनिक सत्ता विराजमान थी। यह कोई प्राचीन राजसी दरबार नहीं था, फिर भी दरबारी सारी शर्तें मौजूद थीं।

सभा के सामने एक महिला खड़ी थी। चेहरे पर साधारण-सा घूंघट था। मन में परंपरा और आत्म-सम्मान की आभा थी।

बातों का सिलसिला चला। हंसी उछली। फिर अचानक—एक हरकत हुई। घूंघट खिसक गया। किसी ने नहीं कहा—"रुको।" किसी ने आंखें नहीं झुकाईं।

स्त्री की मर्यादा को एक बार फिर मनोरंजन समझ लिया गया। सभा चलती रही। शब्द बोले जाते रहे। तालियां बजती रहीं।

इतिहास ने इसे पहली बार नहीं देखा था। नाम बदले थे, वेश बदले थे, पर सभाएं वही थीं।

धृतराष्ट्र तो अंधा था किन्तु, सभा में कोई भीष्म नहीं कांपा, कोई विदुर नहीं बोला, कोई द्रोण नहीं शर्माया। सब मौन में डूबे रहे। घटना धीरे-धीरे "अनावश्यक बहस" में बदल दी गई।

■■

नैतिक मूल्य और मानवीय स्वतंत्रता

❖लुबना सबूब

मानव इतिहास में स्वतंत्रता और नैतिकता के संबंध पर निरंतर विचार होता रहा है। प्रश्न यह नहीं रहा कि मनुष्य स्वतंत्र है या नहीं, बल्कि यह रहा है कि उसकी स्वतंत्रता की दिशा क्या हो और उसकी सीमाएं कहां तय हों। मनुष्य को विवेक, चेतना और चुनाव की क्षमता के साथ पैदा किया गया है, लेकिन इसी के साथ उसे उत्तरदायित्व का बोध भी दिया गया है। इसलिए स्वतंत्रता को केवल इच्छाओं की निरंकुश पूर्ति के रूप में नहीं, बल्कि एक नैतिक अनुशासन के भीतर समझा गया है।



आधुनिक विमर्श में अक्सर स्वतंत्रता और नैतिकता को एक-दूसरे के विलोम के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। यह मान लिया जाता है कि स्वतंत्र सोच रखने वाला व्यक्ति नैतिक नहीं हो सकता, और नैतिक व्यक्ति स्वतंत्र विचार का नहीं हो सकता। यह धारणा वास्तव में स्वतंत्रता और नैतिकता—दोनों की अधूरी समझ का परिणाम है।

स्वतंत्रता और नैतिकता का अंतर्संबंध

इसी दृष्टि से स्वतंत्रता और नैतिकता को एक-दूसरे का विरोधी नहीं, बल्कि परस्पर पूरक माना गया है। स्वतंत्रता यदि मूल्यहीन हो जाए तो वह स्वच्छंदता में बदल जाती है, और नैतिकता यदि चेतन चयन से रहित हो जाए तो वह महज़ औपचारिकता बनकर रह जाती है। मनुष्य की गरिमा इसी संतुलन में निहित है कि वह स्वतंत्र होकर भी अपने कर्मों के प्रति उत्तरदायी रहे।

आधुनिक विमर्श में अक्सर स्वतंत्रता और नैतिकता को एक-दूसरे के विलोम के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। यह मान लिया जाता है कि स्वतंत्र सोच रखने वाला व्यक्ति नैतिक नहीं हो सकता, और नैतिक व्यक्ति स्वतंत्र विचार का नहीं हो सकता। यह धारणा वास्तव में स्वतंत्रता और नैतिकता—दोनों की अधूरी समझ का परिणाम है।

स्वतंत्रता क्या है? राजनीतिशास्त्र में इस प्रश्न का सीधा-सपाट उत्तर यह दिया जाता है कि व्यक्ति पर बाहरी प्रतिबंधों का न होना ही स्वतंत्रता है। अर्थात् यदि किसी व्यक्ति पर बाहरी नियंत्रण या दबाव न हो, वह बिना किसी पर निर्भर हुए निर्णय ले सके तथा स्वायत्त तरीक़े से व्यवहार कर सके, तो वह व्यक्ति स्वतंत्र माना जाएगा।

प्रतिबंधों का न होना स्वतंत्रता का केवल एक पहलू है। स्वतंत्रता का अर्थ व्यक्ति की योग्यता का विस्तार करना और उसके भीतर निहित संभावनाओं को विकसित करना भी है। इस प्रकार स्वतंत्रता वह स्थिति है, जिसमें लोग अपनी रचनात्मकता और क्षमताओं का विकास कर सकें। इस अर्थ में स्वतंत्रता गरिमापूर्ण जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक है।

समाज में रहने वाला कोई व्यक्ति भला हर प्रकार के प्रतिबंधों की पूर्ण अनुपस्थिति की उम्मीद कैसे कर सकता है? ऐसे में यह समझना ज़रूरी हो जाता है कि कौन-से प्रतिबंध न्यायोचित हैं और कौन-से नहीं; किन्हें स्वीकार किया जा सकता है और किन्हें हटाया जाना चाहिए। वे आदर्श और मूल्य क्या हों, जिनकी बुनियाद पर यह सब तय किया जाए? इन्हीं आदर्शों, सिद्धांतों, नियमों और प्रतिबंधों को धर्म नैतिक मूल्य (moral values) कहता है।

हमें नैतिक मूल्यों की आवश्यकता क्यों है?

सिद्धांतों, नियमों और प्रतिबंधों की अनुपस्थिति में इंसानी रिश्तों में जो बिगाड़ पैदा होगा, उससे मानव समाज अव्यवस्था की गर्त में पहुंच जाएगा। लोगों के बीच महत्वाकांक्षाओं का टकराव एक सामान्य बात है। अपनी ज़रूरतों और इच्छाओं की पूर्ति के लिए सीमित संसाधनों पर प्रतिस्पर्धा हम रोज़ देखते हैं। समाज में असहमति उभरने के अनेक कारण हो सकते हैं। हम अपने चारों ओर छोटे-बड़े मुद्दों पर लड़ने को तत्पर लोगों को देखते हैं। शहरों में कार पार्किंग को लेकर झगड़े और गांवों में गली-नाली या ज़मीन के विवाद इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।

सार
यह है कि नैतिकता, स्वतंत्रता की आधारशिला है। नैतिकता के बिना वास्तविक स्वतंत्रता संभव नहीं। आवश्यक नियमों और ज़रूरी प्रतिबंधों को दरकिनार कर महज़ इच्छाओं की गुलामी, बाज़ार की दासता और रीति-रिवाजों का अंधानुकरण किसी भी अर्थ में आज़ादी नहीं कहा जा सकता। हमें आज़ादी और मनमानी के बीच के फ़र्क़ को समझना होगा।

हम इस दुनिया में कुछ ज़रूरतों और इच्छाओं से बंधे हुए हैं। यदि इन ज़रूरतों और इच्छाओं की पूर्ति में नियमों और सिद्धांतों के किसी समुच्चय (set) का पालन न किया जाए, यदि किसी भी क़ीमत पर येन-केन-प्रकारेण इच्छाओं को पूरा करना ही जीवन का लक्ष्य बन जाए, तो समाज को तबाही से कोई नहीं बचा सकता। तथाकथित स्वतंत्रता के गगनभेदी नारों के साथ ऐसी अव्यवस्था जन्म लेगी कि मानव समाज में वास्तविक स्वतंत्रता के लिए लोग तरस जाएंगे।

आज यही हो रहा है। स्वतंत्रता के विकृत नारों के सहारे अपनी कुंठित इच्छाओं की पूर्ति के लिए एक वर्ग किसी भी मूल्य और प्रतिबंध को स्वीकार करने को तैयार नहीं है। परिणामस्वरूप समाज स्वच्छंदता, निर्लज्जता और अश्लीलता से भरता जा रहा है। इच्छाओं की "गुलामी" को आज़ादी कहा जा रहा है। ख़ासकर युवा पीढ़ी इस छलावे में फंस रही है। वे यह समझते हैं कि नैतिक मूल्यों से "पिंड छुड़ाकर" वे स्वतंत्र हो रहे हैं। "मेरी ज़िंदगी, मेरी मर्ज़ी" जैसे नारों ने युवाओं को कहीं का नहीं छोड़ा है।

युवा पीढ़ी मानसिक तनाव, बिखराव, तन्हाई और अवसाद का शिकार हो रही है, जिसके कारण उसकी सकारात्मक ऊर्जा और रचनात्मकता दांव पर लग गई है।

सार यह है कि नैतिकता, स्वतंत्रता की आधारशिला है। नैतिकता के बिना वास्तविक स्वतंत्रता संभव नहीं। आवश्यक नियमों और ज़रूरी प्रतिबंधों को दरकिनार कर महज़ इच्छाओं की ग़ुलामी, बाज़ार की दासता और रीति-रिवाजों का अंधानुकरण किसी भी अर्थ में आज़ादी नहीं कहा जा सकता। हमें आज़ादी और मनमानी के बीच के फ़र्क़ को समझना होगा।

नैतिक मूल्य कहां से प्राप्त किए जाएं?

इस प्रश्न के उत्तर में कांट जैसे दार्शनिक भी एक सर्वशक्तिमान सत्ता की "आवश्यकता" को स्वीकार करते हैं। धर्म का बुनियादी प्रश्न ही ईश्वर की अवधारणा पर आधारित है। एक सर्वशक्तिमान ईश्वर की सत्ता को स्वीकार किए बिना कोई नैतिक मानक और मूल्य दीर्घकाल तक टिकाऊ नहीं हो सकते। यदि मैं यह कहता हूं कि नैतिकता के लिए ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करना ज़रूरी है, तो इसका अर्थ यह नहीं कि नास्तिक कभी नैतिक मानकों को नहीं पहचानते। निश्चय ही वे भी नैतिक व्यवहार करते हैं।

हां, यह अवश्य है कि एक नास्तिक निरपेक्ष (absolute) नैतिक सिद्धांतों में विश्वास करने के लिए पर्याप्त तर्कसंगत आधार प्रस्तुत नहीं कर सकता। और जब लोग बिना किसी न्यायोचित कारण के नैतिक सिद्धांतों को स्वीकार करते हैं, तो उन पर उनकी पकड़ अपेक्षाकृत कमज़ोर होती है, बनिस्बत उनके, जो नैतिक मूल्यों को तर्कसंगत आधार पर स्वीकार करते हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि ईश्वर में विश्वास करने वाले लोग पूर्ण रूप से नैतिक होते हैं, किंतु वे तार्किक रूप से नैतिक अवश्य होते हैं। ■■

महिलाओं की गरिमा और वास्तविक सशक्तीकरण



❖नुज़हत यासमीन

मानव समाज में महिला एवं पुरुष दोनों का अस्तित्व महत्वपूर्ण है, महिला मानव समाज का आधा अंश है। उसकी भागीदारी से ही समाज क़ायम है। परन्तु दुर्भाग्य से समाज में महिलाओं के साथ न्याय का मामला नहीं किया गया। उसे हीन और निर्बल मानकर उसका शोषण किया जाता रहा। उन्हें उनके अधिकारों से वंचित रखा गया। उनकी गरिमा और आत्म-सम्मान को ठेस पहुंचाई जाती रही। उनकी स्थिति को सदैव कमतर आंका गया और समाज में उनकी स्थिति दयनीय बनी रही।

जब महिलाएं जागरूक हुईं तो उन्होंने अन्याय और अत्याचार के विरोध में आवाज़ें बुलंद की और समाज में महिलाओं के आत्म-सम्मान और सशक्तीकरण की आवश्यकता महसूस की गई। नारीवादी आन्दोलनों ने भी अंतरराष्ट्रीय संस्थानों में महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक व मानसिक सभी स्तरों पर उनमें आत्म-विश्वास पैदा कर उन्हें सशक्त बनाने की कोशिश आरंभ की।

महिला सशक्तीकरण बुनियादी मानवधिकार है और एक शांत एवं समृद्ध समाज के लिए आवश्यक है। महिला सशक्त होती है तो परिवार और समाज मज़बूत बनते हैं। परन्तु महिलाओं के सशक्त और मज़बूत बनने की इस प्रक्रिया में संतुलन का अभाव है। आंकड़े बताते हैं कि एक ओर अगर उनकी दशा में कुछ सुधार हुआ तो दूसरी ओर समस्याएं गहराती चली गईं। सशक्तीकरण प्राप्त करने के लिए महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्म-निर्भर बनने की प्रेरणा दी गई और उन्होंने बाहर की दुनिया में अपने क़दम रखे।

शिक्षा प्राप्त करने और रोज़गार के क्षेत्र में महिलाओं ने भरपूर योगदान दिया। यह क़दम प्रगति का प्रतीक था, लेकिन इस प्रक्रिया ने महिलाओं पर दोहरा बोझ डाल दिया। घर और बाहर की ज़िम्मेदारियों से महिलाएं हताश होने लगीं और इसका सीधा प्रहार उनके घरेलू जीवन पर पड़ा। घरों में झगड़े बढ़ने लगे। बच्चों से मां की ममता छिन गई। वे अकेलेपन का शिकार होकर डिप्रेशन में जाने लगे। आज समाज में बिखरते परिवार और सिंगल पैरेंट की बढ़ती संख्या इसका उदाहरण है। घर से निकल कर महिलाओं ने अपने घर का स्तर अवश्य बुलंद किया है लेकिन सामाजिक सुरक्षा के अभाव में उनका उत्पीड़न और शोषण आज भी जारी है। उनकी गरिमा और मर्यादा पर पड़ते प्रहार से समाज ख़ूब अवगत है। यह एक गंभीर समस्या है। उन्नति और प्रगति के इस दौर में भी महिलाएं त्रस्त हैं। उनका जीवन दो भाइयों के बीच जूझता है। एक ओर लिंग के आधार पर जन्म-जात भेदभाव है। बेटी का जन्म लेना ही अपशकुन है। जाने कितनी बच्चियों की मां की कोख में ही हत्या कर दी जाती है। हीन भावना, घरेलू हिंसा, दहेज प्रथा जैसी समस्याएं हैं। दूसरी ओर स्वावलंबन और आज़ादी के भ्रामक नारे हैं परंतु यहां भी महिला का जीवन टूटते परिवार, डिप्रेशन ग्रस्त बच्चे, मर्यादा एवं आत्म-सम्मान का अभाव, असुरक्षा की भावना, वृद्धाश्रम की बढ़ती संख्या और आत्महत्या के बढ़ते आंकड़े बहुत कुछ सोचने पर मजबूर करते हैं।

इस समस्या का समाधान क्या है? ऐसी संतुलित योजना जो महिलाओं को सशक्त और आत्म-विश्वास से परिपूर्ण करे

उनकी गरिमा और आत्म-सम्मान की सुरक्षा करे। परिवार से मज़बूत सम्बन्ध नैतिकता और संस्कार से सम्पन्न परिवार और आदर्श समाज का निर्माण हो सके।

हमारे पालनहार ने हमें ऐसा ही सुनियोजित मार्गदर्शन दिया है जिसके अनुसार जीवन व्यतीत करने वाले समस्त मानव के लिए भलाई, शांति और संतुष्टि के शुभ सूचना है।

इस्लामी शिक्षा के अनुसार पुरुष और महिला में लिंग के आधार पर कोई भेदभाव नहीं है। सबके मौलिक अधिकार समान हैं।

इस्लाम धर्म महिलाओं को बुलंद मक़ाम देता है जहां उसे मां, बहन, बेटी और पत्नी की हैसियत से सम्मान, सुरक्षा और अधिकार दिये गये हैं।

''ऐ लोगो! अपने रब का डर रखो, जिसने तुमको एक जीव से पैदा किया और उसी जाति का उसके लिए जोड़ा पैदा किया और उन दोनों से बहुत-से पुरुष और स्त्रियां फैला दीं। अल्लाह का डर रखो, जिसका वास्ता देकर तुम एक-दूसरे के सामने आपनी मांगें रखते हो। और नाते-रिश्तों का भी तुम्हें ख़याल रखना है। निश्चय ही अल्लाह तुम्हारी निगरानी कर रहा है।'' (क़ुरआन, 4:1)

इन अधिकारों में उसे जीवित रहने का अधिकार, शिक्षा, आत्म-सम्मान, विरासत, निकाह और ख़ुला के अधिकार शामिल हैं। महिला समाज की एक महत्वपूर्ण हस्ती है। उसके दायित्व और उसके अधिकार दोनों उसकी प्रकृति के अनुरूप तय किये गये हैं ताकि उसे संतुष्टि और सशक्तीकरण प्राप्त हो।

इस्लाम में महिलाओं के महत्वपूर्ण पहलू

1. महिला और पुरुष दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। मानवता की तकमील के लिए दोनों का अस्तित्व ज़रूरी है। किसी माता-पिता को भी यह अधिकार नहीं है कि कन्या शिशु की भ्रूण हत्या करे या उसके जन्म के बाद उसे मार डाले। क़ुरआन में ऐसे लोगों को कठोर दंड की सूचना दी गई है।

2. इस्लाम ने पुरुष व महिला दोनों की शिक्षा पर ज़ोर दिया है। पिता का दायित्व है कि बेटियों की शिक्षा का प्रबंध करे।

3. सामाजिक एवं आर्थिक रूप से सम्पन्न होना महिला का अधिकार है। उसे विरासत पाने और धन-दौलत रखने का अधिकार है।

4. पति एवं पत्नी एक-दूसरे के लिए ख़ुशी और संतुष्टि का कारण बनाए गये। उन्हें एक-दूसरे से प्रेम व सम्मान का मामला रखने के निर्देश दिये गये।

5. महिलाओं की गरिमा और आत्म-सम्मान पर ज़ोर दिया गया है, उन्हें निर्लज्जता, अपमान और अत्याचार से बचाया गया है।

6. महिला एवं पुरुष के कार्य क्षेत्र अलग-अलग रखे गये हैं। महिला का दायित्व है कि वह अपने घर को सुकून का गहवारा बनाए और बच्चों को अच्छा प्रशिक्षण दे ताकि भविष्य के समाज को अच्छे इंसान संभालें।

7. अपने कर्मों के अनुसार भी महिला-पुरुष बराबर हैं। ''और उसकी कामना न करो जिसमें अल्लाह ने तुमसे किसी को किसी से उच्च रखा है। पुरुषों ने जो कुछ कमाया है, उसके अनुसार उनका हिस्सा है और स्त्रियों ने जो कुछ कमाया है, उसके अनुसार उनका हिस्सा है। अल्लाह से उसका उदार दान चाहो। निस्संदेह अल्लाह को हर चीज़ का ज्ञान है।'' (क़ुरआन, 4:32) इस्लाम ने महिला को सम्मानित और मर्यादापूर्ण किरदार दिया है जिसमें उसके निजी, पारिवारिक और सामाजिक अधिकार शामिल हैं।

7. सार्वजनिक जीवन में महिलाओं की साझेदारी को इस्लाम ने प्रोत्साहित किया है। समाज के निर्माण और उन्नति में महिलाओं ने हमेशा योगदान दिया है। कार्य क्षेत्र अलग रखने का मतलब यह नहीं कि वे समाज की उन्नति और प्रगति में अपना रोल अदा न करें बल्कि यह कि उनके दायित्व में प्राथमिकता उनके घर और बच्चों की है।

रसूल करीम (सल्ल०) के ज़माने में भी समाज की उन्नति और निर्माण में महिलाओं का पूर्ण योगदान रहा है।

हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) महिला उद्यमी थीं, उनका व्यापार मक्का से बाहर भी फैला हुआ था।

हज़रत आइशा (रज़ि०) ने ज्ञान की रोशनी फैलाई। वे सहाबियों को शिक्षा दिया करती थीं।

हज़रत रुफ़ैदा (रज़ि०) एक सक्षम सर्जन थीं। हज़रत उम्मे-अम्मारा (रज़ि०), हज़रत उम्मे-सुलैम (रज़ि०), हज़रत असमा (रज़ि०), हज़रत सफ़िया (रज़ि०) और बहुत-सी निपुण, विद्वूषी और वीर महिलाओं के नाम इतिहास के पन्नों में जगमगाते हैं और महिलाओं को सशक्तीकरण का भेद बताते हैं। ■■

वेनेजुएला संकट : एक देश का 'कॉरपोरेट टेकओवर'



बीते दिनों अमेरिका ने वेनेजुएला पर सैन्य कार्रवाई करके राष्ट्रपति निकोलस मादुरो को सपत्नी बंधक बना लिया और वहां नई सरकार के गठन का ऐलान कर दिया, जिसे अमेरिका चलाएगा। यह एक देश का 'कॉरपोरेट टेकओवर' है, क्योंकि ख़ुद ट्रंप के ही शब्द हैं, 'उन्हें वेनेजुएला का तेल चाहिए'। इस घटना से उन देशों को साहस मिलेगा, जिनका एजेंडा अब तक अधूरा है। यूक्रेन के कई इलाकों पर अधिकार जमाने का एलान रूस ने किया है, जबकि चीन की मंशा 2027 तक ताइवान पर कब्जा करने की है। अब अमेरिका किस मुंह से इनको रोकने के लिए आगे आएगा?

घटनाक्रम बता रहा है कि 2026 में राजनीतिक अस्थिरता बढ़ेगी। वेनेजुएला पर अमेरिकी सैन्य कार्रवाई ने यह स्पष्ट कर दिया है कि अंतरराष्ट्रीय राजनीति अब सिद्धांतों नहीं, बल्कि खुली शक्ति और संसाधन-हितों से संचालित हो रही है। इस कदम ने वैश्विक व्यवस्था के नैतिक आधार को कमजोर किया है और रूस व चीन जैसी शक्तियों को अपने विस्तारवादी एजेंडों के लिए अप्रत्यक्ष वैधता प्रदान की है। नतीजतन, दुनिया एक ऐसे दौर में प्रवेश कर रही है जहां नियमों की जगह ताकत निर्णायक होगी और 2026 राजनीतिक अस्थिरता, टकराव और संघर्षों के विस्तार का वर्ष बन सकता है।

अरावली की रक्षा: विकास बनाम विनाश की बहस

पहाड़ों को मात्र ऊँचाई के मापदंड में समेट देना उस पारिस्थितिक निरंतरता की अनदेखी है, जिसके सहारे भूजल रिचार्ज, जलवायु संतुलन और मरुस्थलीकरण पर नियंत्रण संभव होता है। सर्वोच्च न्यायालय का अरावली पर फ़ैसला केवल एक पर्वत श्रृंखला तक सीमित नहीं, बल्कि देश के उपेक्षित पहाड़ी पर्यावरण की रक्षा की दिशा में महत्वपूर्ण संकेत है।



पहाड़ केवल संसाधन नहीं, बल्कि जल, जंगल, नदियों और जलवायु संतुलन के आधार हैं, जिन्हें विकास के नाम पर लगातार नुकसान पहुंचाया गया है। अंधाधुंध निर्माण, खनन, वनों की कटाई और विस्फोटकों के उपयोग से हिमालय, पश्चिमी घाट, सह्याद्री और विंध्य जैसे क्षेत्र भूस्खलन और आपदाओं के प्रति बेहद संवेदनशील हो चुके हैं। जलवायु परिवर्तन ने इस खतरे को और बढ़ा दिया है। विंध्य जैसी महत्वपूर्ण पर्वतमालाएं भी अवैध खनन और पर्यावरणीय उपेक्षा से संकट में हैं, जिससे नदियों, जैव विविधता और मानव सुरक्षा पर खतरा मंडरा रहा है। जैसे पेड़ों की कटाई पर सख़्त क़ानून हैं, वैसे ही पूरे देश की पर्वत श्रृंखलाओं के संरक्षण के लिए ठोस और वैज्ञानिक दिशानिर्देश ज़रूरी हैं।

विषाक्त जल



इंदौर में दूषित पेयजल की आपूर्ति से कई लोगों की मौत की ख़बर हमारी नगर-योजना ही नहीं, हमारी व्यवस्था की विषमता पर भी एक त्रासद टिप्पणी की तरह आई है। इंदौर पिछले कई वर्षों से हिंदुस्तान में स्वच्छता के शिखर की तरह पेश किया जाता रहा है। इतने स्वच्छ शहर में ऐसा गंदा पानी कहां से चला आया, जिसे पीकर लोग बीमार पड़ गए और चल बसे? क्या स्वच्छता सर्वेक्षण में गड़बड़ी हुई है?

यदि इंदौर में जानलेवा पेयजल की आपूर्ति को व्यवस्था की चूक का इकलौता मामला मान लेंगे तो उस बड़ी सच्चाई को अनदेखा करेंगे, जो हमारे शहरों और हमारी पूरी नगर-योजना पर भारी पड़ती है। यह घटना किसी एक शहर या एक प्रशासनिक चूक तक सीमित नहीं, बल्कि उस व्यवस्था की विफलता का संकेत है, जिसमें चमकते आंकड़े तो हैं, पर सुरक्षित और समान बुनियादी सुविधाएं नहीं। जब तक स्वच्छता और विकास को केवल प्रदर्शन नहीं, बल्कि हर नागरिक के जीवन और स्वास्थ्य से जोड़ा नहीं जाएगा, तब तक ऐसे 'स्वच्छ' शहर भी भीतर से असुरक्षित बने रहेंगे।

कोविड के बाद प्रदूषण सबसे बड़ा संकट



भारत में वायु प्रदूषण कोविड-19 महामारी के बाद सबसे बड़ा स्वास्थ्य संकट बन चुका है। ब्रिटेन में काम करने वाले भारत के कई सीनियर डॉक्टरों ने न्यूज एजेंसी PTI से बातचीत में यह दावा किया है। डॉक्टरों ने कहा कि आने वाले सालों में प्रदूषण से लोगों की सेहत और देश की स्वास्थ्य व्यवस्था पर लंबे समय तक असर पड़ेगा। सीनियर डॉक्टरों की यह चेतावनी बताती है कि कोविड के बाद भारत एक ऐसे स्वास्थ्य संकट में प्रवेश कर चुका है, जो अचानक नहीं, बल्कि धीरे-धीरे समाज को भीतर से कमज़ोर करेगा। वायु प्रदूषण अब केवल पर्यावरण की समस्या नहीं, बल्कि सार्वजनिक स्वास्थ्य और राष्ट्रीय क्षमता का प्रश्न बन गया है। यदि समय रहते ठोस नीतिगत हस्तक्षेप, स्वच्छ ऊर्जा और स्वास्थ्य-केंद्रित योजनाएँ नहीं अपनाई गईं, तो प्रदूषण आने वाले वर्षों में महामारी से भी अधिक व्यापक और स्थायी नुकसान पहुंचा सकता है।

(An ISO 22000:2005 Certified Company)

OCEANS SECRET

INDIA'S LEADING CANNED FOOD BRAND

- TUNA
- SARDINES
- MACKEREL



www.oceanssecret.in | info@seahath.com | Follow Us: oceanssecret | SHOP ONLINE @ amazon

SEAHATH CANNING CO. Plot - 8, Margao Industrial Estate, Curtorim, GOA, INDIA - 403 709 **CUSTOMER CARE : 0832-2860412**

KANTI Monthly, New Delhi
February 2026
Posted on 20-21 January 2026
Published on 18 January 2026
Posted Delhi RMS Delhi-110006

RNI 53372/91
DL(S)-05/3147/2024-2026
LICENSED TO POST WITHOUT PREPAYMENT
License No. U(SE)-73/2024-26
Total Pages with Cover: 52



A Well Wisher

“रमज़ान का महीना वह है जिसमें कुरआन उतारा गया लोगों के मार्गदर्शन के लिए, और मार्गदर्शन और सत्य-असत्य के अन्तर के प्रमाणों के साथ। अतः तुममें जो कोई इस महीने में मौजूद हो उसे चाहिए कि उसके रोज़े रखे और जो बीमार हो या सफ़र में हो तो दूसरे दिनों में गिनती पूरी कर ले। अल्लाह तुम्हारे साथ आसानी चाहता है, वह तुम्हारे साथ सख़्ती और कठिनाई नहीं चाहता, (वह तुम्हें हिदायत दे रहा है) और चाहता है कि तुम संख्या पूरी कर लो और जो सीधा मार्ग तुम्हें दिखाया गया है, उस पर अल्लाह की बड़ाई प्रकट करो और ताकि तुम कृतज्ञ बनो।”

(कुरआन, 2:185)

J. I. H. Beawar
Rajasthan